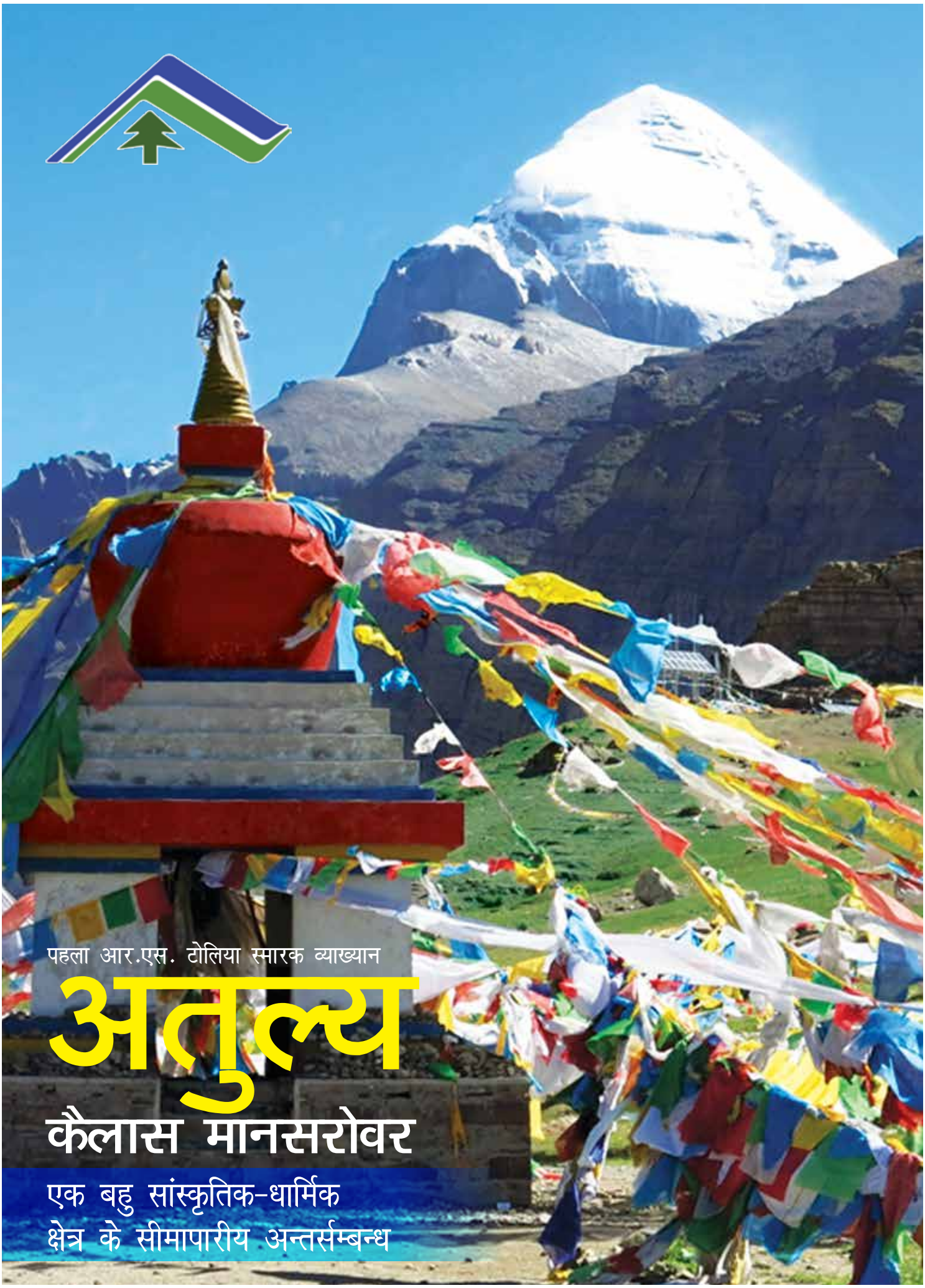

पहला आर.एस. टोलिया स्मारक व्याख्यान

अतुल्य

कैलास मानसरोवर

एक बहु सांस्कृतिक-धार्मिक
क्षेत्र के सीमापारीय अन्तर्सम्बन्ध

Mk- vkj-, l- Vkfy;k (15 नवम्बर 1947-6 दिसम्बर 2016) एक प्रशासक, इतिहासकार, पर्वतों के अध्येता के रूप में जाने जाते हैं। उत्तर प्रदेश में विभिन्न जिम्मेदारियां निभाने के बाद उन्होंने उत्तराखण्ड के वन तथा ग्रामीण विकास सचिव, मुख्य सचिव तथा प्रमुख सूचना आयुक्त आदि पदों पर कार्य किया। वे अनेक संस्थाओं के संस्थापक थे और अन्य अनेक से जुड़े रहे। उन्होंने प्रशासनिक इतिहास पर अनेक किताबें लिखी और अनेक को सम्पादित किया। 'इंडियन माउण्टेन इनिसियेटिव' भारतीय हिमालय को समग्रता में देखने की उनकी कोशिश का प्रतीक है।

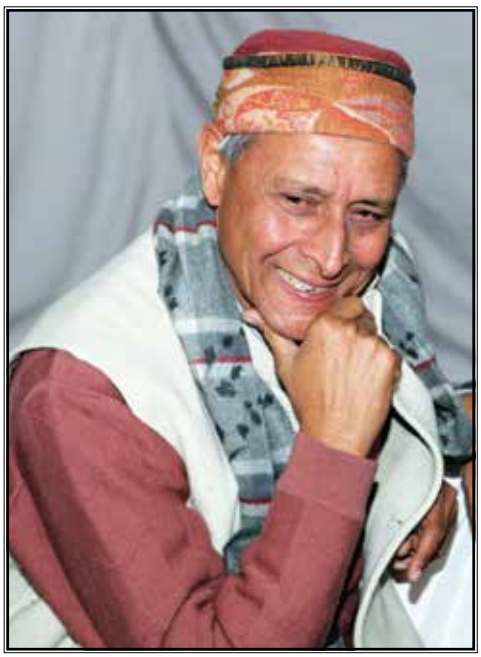

फोटोः अनूप साह

ik- 'kq[kj ikBd ने तीन दशक से अधिक समय तक कुमाऊँ विश्वविद्यालय में अध्यापन किया। आप भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, शिमला तथा नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय के फैलो रहे। हिमालयी इतिहास के अनेक आयामों पर आपकी कुछ पुस्तकें तथा लेख प्रकाशित हुये हैं। हिमालय के सतत अध्ययन यात्री के रूप में प्रतिष्ठित होने के साथ आप भारतीय भाषा लोक सर्वेक्षण तथा पहाड़ फाउण्डेशन से भी जुड़े है और हिमालयी जॉर्नल 'पहाड़' का सम्पादन करते हैं।

पहला आर.एस. टोलिया स्मारक व्याख्यान

अतुल्य कैलास मानसरोवर

एक बहु सांस्कृतिक-धार्मिक क्षेत्र के सीमापारीय अन्तर्सम्बन्ध

शेखर पाठक

11 दिसम्बर 2016 : पर्वत दिवस

गोविन्द बल्लभ पन्त हिमालयी पर्यावरण और विकास संस्थान, कोसी कटारमल, अलमोड़ा 263643

पहला आर.एस. टोलिया स्मारक व्याख्यान

अतुल्य कैलास मानसरोवर

एक बहु सांस्कृतिक-धार्मिक क्षेत्र के सीमापारीय अन्तर्सम्बन्ध

शेखर पाठक

© 'k[kj ikBd 2019
सभी फोटो शेखर पाठक द्वारा
पेज न० 35 का 8वाँ फोटो राजेन्द्र पंत द्वारा एवं बैक कवर इनर उमा भट्ट द्वारा लिया गया है।

प्रकाशक
xkfoUn cYyHk iUr fgeky;h i;koj.k vkj fodkl lLFkku]
dklh dVkjey] vyekMk

मुद्रकः कंपैनियन आर्ट एंड प्रिंटर्स

अनुक्रम

1. हिमालय में कैलास मानस 07

2. एक मिथकीय भूमि की रचना 09

3. भू-पारिस्थितिक आयाम 13

4. अपवाद सांस्कृतिक परिदृश्य की रचना 17

5. औपनिवेशिक ऊँची कूद 19

6. आर्थिक पक्ष 23

7. व्यापार पर एक नजर 25

8. तीर्थयात्रा का नया युग 29

9. और अन्त में 31

संदर्भ तथा टिप्पणियां 38

संदर्भ 42

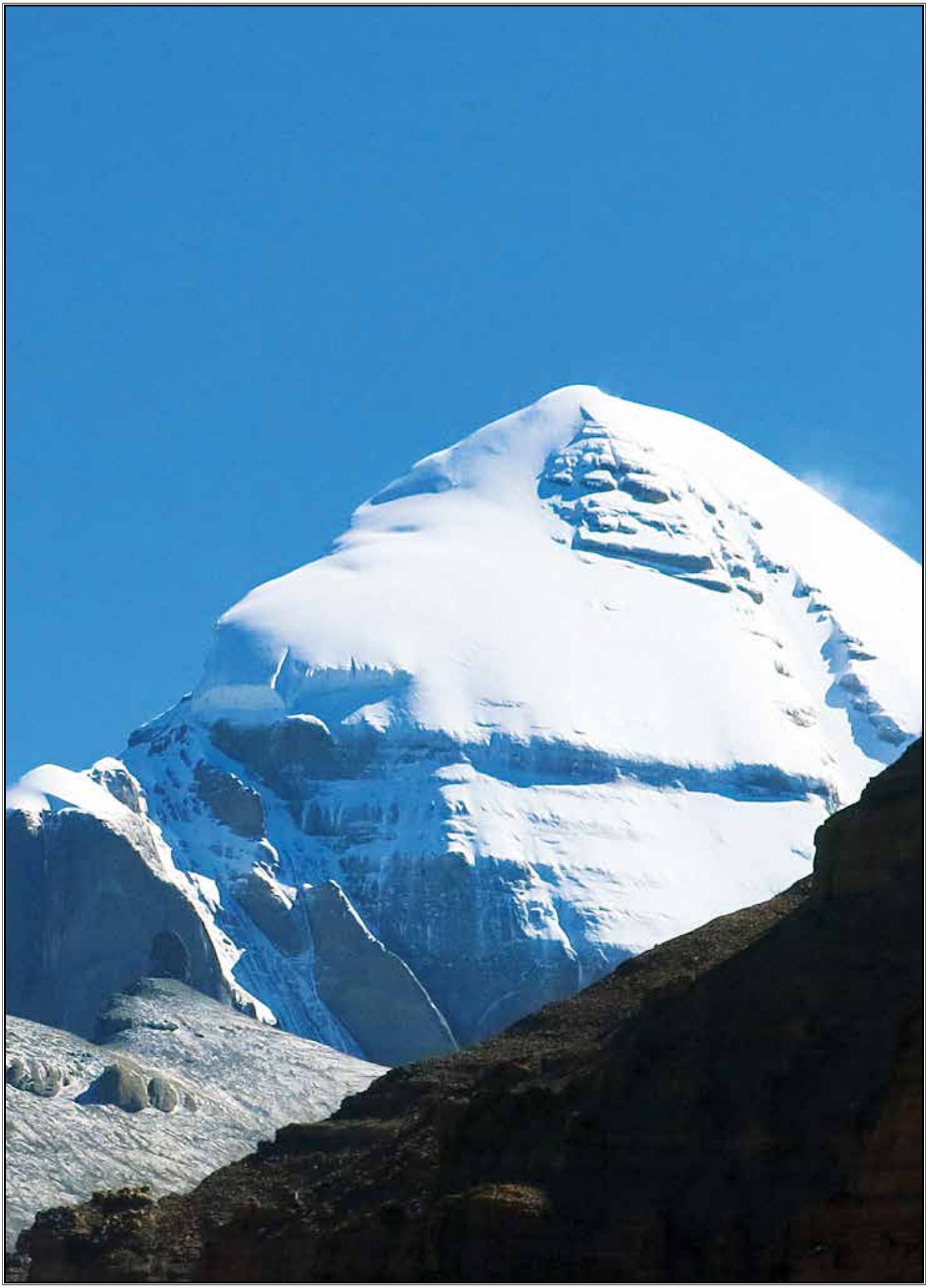

■ कैलास

पहला आर.एस. टोलिया स्मारक व्याख्यान

अतुल्य कैलास मानसरोवर

एक बहु सांस्कृतिक-धार्मिक क्षेत्र के सीमापारीय अन्तर्सम्बन्ध

तिब्बती थन्का में कैलास पर्वत, मानसरोवर, गुरुला पर्वत और राकसताल
(गोविन्दा अनागरिक लामा की किताब ***The Way of the White Clouds*** से साभार)

सबसे पहले मैं गोविन्द बल्लभ पंत पर्यावरण तथा विकास संस्थान के निदेशक तथा उत्तराखण्ड विज्ञान तथा तकनीकी परिषद् के महानिदेशक का आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने पहले आर.एस. टोलिया स्मारक व्याख्यान से जोड़कर मुझे अपने एक दिवंगत मित्र को ही नहीं, एक हिमालय पुत्र और पर्वतों के गहन हितैषी, प्रशासक और इतिहासकार को अन्तरंग सलाम करने का मौका दिया। हिमालय के लिए चिन्तित और कार्यरत सभी मित्र डॉ. आर.एस. टोलिया (15 नवम्बर 1947 - 6 दिसम्बर 2016) को हिमालय तथा इसके वाशिन्दों के पक्ष में कार्य करने की कोशिश के लिये हमेशा याद करेंगे।

आज के व्याख्यान का विषय भी टोलिया जी की गहरी रुचि से जुड़ा है। पश्चिमी तिब्बत या शांग शुंग या डारी खोरसम या छपरांग आदि उनके इतिहासकार मन में लगातार घुमड़ते रहते थे। पश्चिमी नेपाल, उत्तराखण्ड तथा हिमाचल के इस क्षेत्र से गहन रिश्तों का इतिहास रहा है। जब मैंने एक छोटी सी किताब कैलास मानसरोवर यात्रा पर (नीले बर्फीले स्वप्नलोक में) लिखी थी तो उन्होंने सुझाया था कि इस किताब के अगले संस्करण में पश्चिमी तिब्बत के इतिहास को विस्तार से बताया जाना चाहिये। उन्होंने मुनस्यारी में अपने धर का नाम 'थोलिंग निवास' यों ही नहीं रखा था। बौद्ध धर्म के प्रति उनका आकर्षण जीवन के अंतिम सालों में बढ़ गया था।

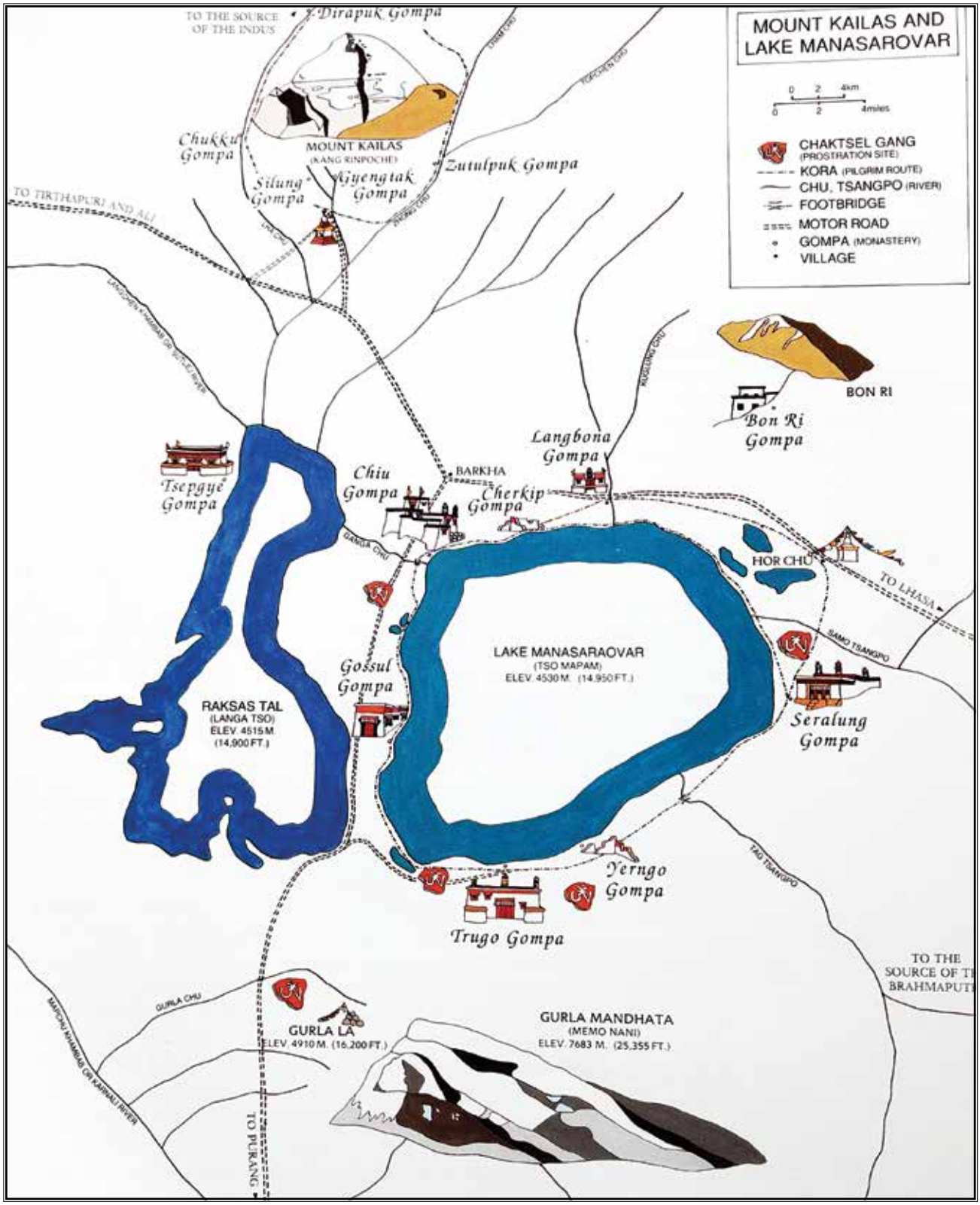

■ कैलास मानस यात्रा पथ (रसेल जानसन तथा केरी मोरान कृत तिब्बत्स सैक्रेड माउन्टेन से साभार)

1 हिमालय में कैलास मानस

हिमालय का पारिस्थितिक, सामाजिक–सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक, आध्यात्मिक और भू–राजनैतिक महत्व और अनेक एशियाई संस्कृतियों तथा समाजों में इसकी केन्द्रीयता सर्वविदित है। हिमालय न सिर्फ भूगर्भिक–भौगोलिक और जैविक विविधता का शानदार घर है बल्कि मनुष्य की विकास यात्रा का जीवित नमूना भी, जहाँ शिकारी–संग्राहक, पशुचारक–खेतीहर–व्यापारी समाज बने, बसे और विकसित हुए और यह इतिहास सदियों में फैला हुआ है। इस पर्वतमाला ने एक विशिष्ट और कई मामलों में नाजुक परिस्थितिकी को जन्म और विकास दिया, जो एशिया के विविध प्राकृतिक और सांस्कृतिक मिजाजों के सह अस्तित्व का मूल आधार बन गई।

हिमालय पर्वत एक उपमहाद्वीपीय चाप की तरह स्थापित है, जो म्यांमार और पूर्वोत्तर भारत के घने वर्षा वनों को लद्दाख के ठण्डे रेगिस्तान से और उत्तर भारत के हरे–भरे विशाल मैदान को तिब्बत के जनशून्य पठार से जोड़ता है। हिमालय कितनी ही तरह से सक्रिय और गतिशील है। इससे गई उपजाऊ मिट्टी और पानी नीचे मैदानों में उर्वरता और जीवन बिखेरता है, जो एक विशाल भू–दृश्य को प्रभावशाली तरीके से रूपान्तरित कर देता है। यह वास्तव में एक विशाल क्षेत्र की जलवायु का निर्माता और नियंत्रक है और साथ ही यहाँ के अत्यन्त विविधता भरे सांस्कृतिक परिदृश्य की रचना भी करता है। इसमें विराज रहे समुदाय और संस्कृतियाँ, जो हजारों सालों में यहाँ आई और विकसित हुई, यहाँ से बाहर को भी जाती रही हैं।[1] यहाँ की मिट्टी और पानी की तरह ही। आज हिमालय को एक ऐसी प्राकृतिक और सांस्कृतिक धरोहर समझा जाने लगा है, जो असली अर्थों में वैश्विक है।

हिमालय एक विशिष्ट और विविधता भरे भूगर्भ और भूगोल के रूप में तो विकसित हुआ ही है पर इसके अपने भूगोल के भीतर भी अनेक ऐसे भू–संरचनात्मक प्राकृतिक रूप विकसित हुये, जिनमें बाद में मनुष्य ने अपने 'संस्कृति क्षेत्र' विकसित किये। यहीं उसने अपने मिथकों को जन्म दिया, उनका विकास किया और अपने 'पवित्र स्थानों' को भी यहीं खोजा और स्थापित किया। हिमालयी प्रकृति के इन आश्चर्यों तथा संस्कृति क्षेत्रों के इर्द गिर्द ही 'पवित्र भूगोल' का विचार विकसित हुआ। इन प्राकृतिक आश्चर्यों में अनेक ग़ल, गौर्ज, दर्रे, बुग्याल, शिखर, नदियां और सरोवर तो हैं ही, पर इनमें दो सरोवरों, दो शिखरों और चार नदियों के स्रोतों से जुड़ा विशाल प्राकृतिक परिसर असाधारण, अतुल्य और अपवाद प्राकृतिक रचना है। भूगर्भ, भूगोल, जलवायु और ऊँचाई ने संयुक्त रूप से पश्चिमी तिब्बत के इस पवित्र, कठिन, विशिष्ट और सुन्दर क्षेत्र की रचना की, जिससे आकर्षित और प्रभावित होकर बहुत बाद में अनेक समुदायों, संस्कृतियों और धर्मों ने अपने को इससे जोड़ने को विवश पाया। स्पष्ट ही यह पश्चिमी तिब्बत का कैलास–मानसरोवर क्षेत्र है।[2]

■ कैलास

कैलास–मानसरोवर क्षेत्र अनेक एशियाई समाजों के चेतन–अवचेतन में सदियों से धड़कता रहा है। एक हिम पर्वत और एक विशाल ताल की परिक्रमा में जैसे मनुष्य का तारण छिपा हो या इस अथवा उस जीवन की समग्र मुक्ति। प्रकृति में अपनी आस्था को ढूढना हमारे पूर्वजों ने अर्सा पहले शुरू कर दिया था पर ऐसा नहीं सोचा गया होगा कि आगामी समय में जन्म लेने वाले धर्म भी इस प्रकृति से मुक्त नहीं हो पायेंगे। तिब्बत में तो जैसे प्रकृति इन धर्मों में ही उभयनिष्ठ स्थाई भाव की तरह पसर गई हो। पर तिब्बत का यह हिस्सा सिर्फ एक मिथक या पवित्र तीर्थ ही नहीं है। यह आज की दुनियां का एक प्राकृतिक, सामाजिक–सांस्कृतिक और राजनैतिक यथार्थ भी है। इसे एशिया की राजनीति से काटकर भी नहीं देखा जा सकता है क्योंकि तिब्बत के सरलतम पशुचारक या खेतीहर समाज आज भी परम्परा और परिवर्तन तथा बौद्ध धर्म और गड़बड़ा गये चीनी साम्यवाद के बीच अनिर्णय के दोराहे पर खड़े हैं।

हिमालय न सिर्फ भूगर्भिक – भौगोलिक और जैविक विविधता का शानदार घर है बल्कि मनुष्य की विकास यात्रा का जीवित नमूना भी

यह क्षेत्र हिमालय के समानान्तर खड़ी गुरुला तथा कैलास पर्वतमालाओं और उनमें चमकते तथा प्रभावशाली गुरुला मान्धाता और कैलास[3] शिखरों, इनके बीच में विराजते सूर्याकारी मानसरोवर और

■ ताकलाखर, ताकलाकोट से

अर्ध चन्द्राकारी राकसताल के साथ सांगपो (ब्रह्मपुत्र), सिन्धु, सतलज और करनाली जैसी विशाल नदियों को जन्म देने वाला बना, जो उत्तरी भारत की तीन भाग्यविधाता नदी व्यवस्थाओं का मूल आधार हैं। यह क्षेत्र और इसके विभिन्न स्थान बिन्दु (ताल, नदी, शिखर, दर्रे, गुफा, चट्टान आदि) एक प्रकार से 'पापमुक्ति' के या 'पाप को नष्ट करने वाले' क्षेत्र के रूप में जाने जाते हैं।

इसीलिए दुनियाँ के चार बड़े धर्मों को मानने वाले समुदायों के लिए यह एक अपवाद गन्तव्य बन सका। साथ ही आधुनिक पर्यटकों[4], अन्वेषकों[5], वैज्ञानिकों[6], नास्तिकों[7], अज्ञेयवादियों (अर्ध–धार्मिकों)[8] आदि के लिए भी यह लगातार मोहने वाला और चुनौतीदार क्षेत्र बन गया। ऐसा माना जाता है कि आकर्षण और बुलावे की यह गाथा कम से कम पिछले ढाई–तीन हजार सालों में विकसित हो सकी होगी।

**

कैलास पर्वत और मानसरोवर इस पवित्र भूगोल और इससे जुड़ी पुराण कथाओं के केन्द्र में हैं। प्रत्यक्ष भूगोल से चार धर्मों के मिथकों तक इस पर्वत और ताल की महिमा फैली है। कैलास अपने बर्फीले शिखर को मानसरोवर में प्रतिबिम्बित देखता है। कांग्री करचक (तिब्बती कैलास पुराण) के अनुसार यह पर्वत ब्रह्माण्ड के केन्द्र में स्थित है और एक धुरी की तरह आसमान की तरफ उठा है। इसके एक तरफ कल्पवृक्ष है तो चारों ओर स्वर्ण और रत्न हैं। यानी पूर्व में स्फटिक, पश्चिम में माणिक, दक्षिण में नीलम और उत्तर में सोना। इस पुराण में यह मान्यता भी वर्णित है कि इसका शिखर प्रदेश सुगंधित पुष्पों और औषधि पौधों से भरा है। इसके चारों तरफ बुद्ध के चार पदचिन्ह हैं। देवगण इस शिखर को स्वर्ग को न उठा ले जा सकें और दक्षिणी प्रदेशों के लोग नीचे न ला सकें, अतः इसके चारों तरफ जंजीरें लगी हैं। मिथकों की इतनी अधिक पर्तें कैलास और मानसरोवर के साथ जुड़ी हैं कि हर बार उनका स्रोत और यात्रा प्रवाह पहचान पाना कठिन होता है।

वर्तमान समय में यह पर्वत और इसके साथ जुड़े विभिन्न धर्मों–विश्वासों के मिथक बहुत महत्व के हो गये हैं क्योंकि ये दोनों यानी पर्वत और मिथक सम्पूर्ण मानवता की प्राकृतिक और सांस्कृतिक धरोहर माने जाने लगे हैं। तीन देशों में फैला यह 'पवित्र क्षेत्र' अब और अधिक महत्व पाता जायेगा। आज के व्याख्यान में मैं कैलास सीमापारीय सांस्कृतिक क्षेत्र द्वारा सामान्यतया एशियाई और विशेष रूप से इस क्षेत्र विशेष के लोगों के पारिस्थितिक, सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन में निभाई गई और निभाई जा रही भूमिका को समझने और विश्लेषित करने का प्रयास करुंगा।■

2 एक मिथकीय भूमि की रचना

यह निर्विवाद है कि देवगणों की उपस्थिति सिर्फ मानव समाजों के बीच ही होती है। जहाँ मनुष्य नहीं हैं वहां देवता नहीं होते हैं। सबसे बड़ा उदाहरण अन्टार्कटिका है, जहां देवता और देवस्थान नहीं पाये गये। दूसरा स्थान चन्द्रमा है। संस्थागत धर्मों के उदय से बहुत पहले मनुष्य समाज ने तमाम 'देव तत्व' प्रकृति के विभिन्न रूपों में देखे–चाहे भय से या कि अपनी शुरूआती तर्कशीलता से। कैलास पर्वत के आकर्षण और सौन्दर्य को सबसे पहले पश्चिमी तिब्बत के शिकारी–संग्राहकों या पशुचारकों ने स्पर्श किया होगा। पर तब उनके पास किसी देवता का नाम उपलब्ध नहीं था, क्योंकि देव–मिथकों का अभी जन्म होना था और उनकी प्रारम्भिक लोक अभिव्यक्ति अभी समय और स्थान में घुलनी और अंकुरित होनी शुरू नहीं हुई थी।

प्रारम्भिक मिथकों का जन्म किसी भी संस्थागत धर्म के जन्म से बहुत पहले हो चुका था और इन मिथकों की शुरूआत प्रकृति के किसी घटक या किन्हीं घटकों के सम्मान, भय या पूजा के साथ शुरू हुई। यह एक प्रकार से प्रारम्भिक 'लोक धर्म' का स्वरूप रहा होगा। बहुत बाद में संस्थानिक धर्मों के उदय के साथ इन धर्मों के देवगणों का निवास प्रकृति के इन तमाम रूपों में स्थापित किया जाना शुरू हुआ। किसी पर्वत, नदी, सरोवर, जंगल, गुफा, जलस्रोत, दर्रे आदि से इन देवगणों का रिश्ता स्थापित किया जाने लगा। कैलास पर्वत और इससे जुड़ी लम्बी परम्परा पर एक महत्वपूर्ण अध्ययन करने वाले एलेक्स मैके (Alex McKey) ने लिखा है:

'हमें यह याद रखने की जरूरत है कि कैलास सम्बन्धी पौराणिक संदर्भ उस समय और स्थान की ज्ञान की दशा को सामने रखते हैं जिस समय और स्थान में उन्हें इस्तेमाल किया गया होगा। इस तरह के तमाम पक्ष और जानकारियां अलग अलग स्रोतों से जमा किये गये होंगे। विभिन्न सन्यासी, व्यापारी, घुमक्कड़ कबीले, गुलाम, कानूनी रूप से बहिष्कृत व्यक्ति, सोने की खोज में निकले लोग, घुमन्तू गायक, सिपाही दल और अन्य इसी तरह के चरित्रों ने अपने अनुभवों के सीधे संदर्भ नहीं छोड़े। तमाम अभिकर्ताओं (ऐजेन्टों) तथा लेखकों द्वारा जमा, तमाम तरह की संस्कृतियों और सम्प्रदायों के सदस्यों से स्वीकृत और चतुराई से पहले से प्रचलित मिथकीय चक्रों से जुड़े ये

■ डेरापुक से कैलास

■ कैलास

तमाम प्रतिनिधित्व 'मिथकों' में रूपान्तरित होते गये। विभिन्न पौराणिक पाठों को विभिन्न विश्वदृष्टियों के प्रतिनिधित्व के रूप में देखने से हम वर्तमान एकता के पीछे की ऐतिहासिक विविधता को समझ सकते हैं। इस तरह हम उन्हें बौद्ध, जैन और तांत्रिक परम्परा के आलोक में विश्लेषित कर सकते हैं, जिनमें से प्रत्येक ने कैलास की विचारशील समझ को संरक्षित कर उसका प्रतिनिधित्व किया, पर जिसका रूप सिर्फ औपनिवेशिक काल में संगठित हुआ।'[9]

e|d vkx fy[kr g%

'साथ ही जो तमाम विश्वदृष्टियां (कास्मोलाजीज) मिलकर हिन्दू परम्परा के रूप में विकसित हुईं; उनका आधार बौद्ध, जैन ही नहीं तिब्बती बोनपा धर्म और अभिधर्मकोश (जिसे 4–5 वीं सदी के उत्तर पश्चिमी भारत के भिक्षु वशुबंधु ने रचा था) बना। इस प्रकार कैलास और मानसरोवर के संदर्भ में जो मूल स्वरूप इन विश्वदृष्टियों में मौजूद है, वह एक केन्द्रीय पर्वत से जुडा था, जिसका नाम 'मेरु' था। यह पर्वत चार या उससे भी अधिक नदियों का स्रोत था और जिसका अलग–अलग विवरण ों में अलग–अलग नाम–संदर्भ मिलता है। यह मॉडल या आदर्श अकेले 'मेरु' से ही नहीं जुड़ा था बल्कि कैलास पर्वत के भू–त्रिक (geo-sacral) सम्बन्धों का आधार भाग भी बना। समय के प्रवाह के साथ मेरु, ब्रह्माण्ड के एक केन्द्र और एक वास्तविक हिमालयी शिखर, कैलास का फर्क विभिन्न विचारों और अभिव्यक्तियों में धीरे–धीरे धुधलाता गया।'[10]

जो मुख्य धर्म पश्चिमी तिब्बत के इस पवित्र भाग से अपने को जोड़ते हैं उनमें प्रमुख हैं बोन धर्म, हिन्दू धर्म, बौद्ध धर्म और जैन धर्म। सिख धर्म कैलास से सीधा नहीं जुड़ा है पर गुरु नानक द्वारा की गई यात्रा तथा उनके द्वारा बौद्ध सिद्धों से अनेक धार्मिक और आध्यात्मिक विषयों पर की गई चर्चा इस क्षेत्र की महत्ता उजागर करती है। बीसवीं सदी के चौथे दशक में सिख उत्साहियों द्वारा उत्तराखण्ड के लोकपाल नामक स्थान पर एक उच्च हिमालयी ताल और शिखर के साथ हेमकुण्ड साहिब के रूप में कैलास मानसरोवर का विकल्प सा ढूढने में कामयाबी पाने के बाद सिख धर्मावलम्बियों का कैलास की तरफ अधिक ध्यान नहीं गया।

7वीं सदी के तिब्बती शासक सौंगस्टैन गाम्पो (सौंगजन गन्बू) से बहुत पहले से कैलास–मानसरोवर क्षेत्र बोन धर्म का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण केन्द्र था।[11] यह सामी धर्म पश्चिमी तिब्बत के दूरस्थ शांगशुंग (Zhang Zhung) राज्य में विकसित हुआ। कैलास, जिसे बोन परम्परा में कांग टिजे (Kang Tise) तथा यंगद्रुक गुत्सेग (Yungdruk Gutseg) यानी 'नौ मंजिला स्वस्तिक' भी कहा जाता है, बोन धर्म की आत्मा पर्वत (Soul Mountain) या मूल पर्वत की तरह माना गया है। यह माना जाता है कि यह पर्वत बोन धर्म के संस्थापक टोनपा शैनरैब मिवोचे, जिन्हें गोविन्दा अनागरिक लामा ने 'बोन धर्मावलम्बियों का बुद्ध' कहा है,[12] की 'निर्वाण काया' है। कैलास पर्वत की कल्पना एक विशाल चोरतन या स्तूप के रूप में भी की जाती है जो स्फटिक का बना है और जिस पर देवताओं के अनेक कुनबे निवास करते हैं।[13] वर्तमान में कैलास के बोन प्रतीकों को अलग से ढूंढ पाना कठिन है पर सामान्यतया यह माना जाता है कि 'नौ मंजिले स्वस्तिक' का विचार बोन परम्परा से ही आया है। बाद में अधिकांश बोन प्रतीक और कथाएं बौद्ध तथा हिन्दू धर्म द्वारा अपनी सांस्कृतिक–धार्मिक व्यवस्था में स्वीकार, सुव्यवस्थित तथा अंगीकार कर ली गईं।

कैलास पर्वत का मुख्य बौद्ध अधिष्ठाता देव देमचौक/देमचौग (चक्र सम्वरा या परमानन्द) और उसकी सहयोगिनी (युम) दोर्जी फांगमो या वज्रवाराही है (वज्र योगिनी नाम भी इसको दिया गया है[14])। तिब्बत के तीन प्रमुख और पवित्र पर्वत–कैलास, लापचीगांग तथा टाकपा शेलरी–देमचौक के स्थान माने जाते हैं। देमचौक की उपासना 12 वीं सदी की शुरूआत में फागमो ड्रूपा ने प्रारम्भ की और द्रिगुंगपा, ड्रूपा और गेलुग्पा बौद्ध समुदायों ने इसको प्रचारित किया।[14] देमचौक और दोर्जी फांगमो को तिब्बती चित्रों तथा मूर्तियों में एकीभूत रूप से आलिंगनबद्ध दिखाया गया है और ये मूर्तियाँ या चित्र विभिन्न मठों और संग्रहालयों में आज भी देखे जा सकते हैं। कैलास पर्वत के पास ही एक छोटा शिखर तिजुंग है, जिसे दोरजी फांगमो का निवास माना जाता है। गौतम बुद्ध तथा उनके 500 बोधिसत्व कैलास पर्वत में निवास करते हैं, ऐसा बौद्ध परम्परा में माना जाता है। कैलास पर्वत बौद्ध तांत्रिक गायक संत मिलारेपा का निवास भी माना जाता है।

इस पर्वत के चार प्रवेश द्वार हैं, जिनकी सुरक्षा चीनी बाघ, कछुआ, लाल पक्षी और फिरोजी रंग का अजगर (ड्रेगन) चार मुख्य स्थानों पर कर रहे हैं।[16] कैलास पर्वत को बोनपा प्रभाव और नियंत्रण से मुक्त करने के लिए मिलारेपा और बोनपा पुजारी नारो भुनचोन के बीच एक जादू भरी प्रतियोगिता हुई। अन्त में मिलारेपा की जीत हुई। उस समय से बोनपा समुदाय ने कैलास पर्वत की परिक्रमा या प्रदक्षिणा धड़ी की सुई की उल्टी दिशा (यानी यात्री का बांया हाथ कैलास पर्वत की तरफ होगा। हिन्दू, बौद्ध या जैन इसे तथाकथित सुल्टी प्रकार से करते हैं, जब यात्री का दांया हाथ कैलास की ओर होता है) से करनी शुरू की। बोन धर्म प्रकृति में निहित था और उसकी जड़ें प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों से जुड़ीं थीं। बोन धर्म अंधकारमय तथा जादुई दैवीय शक्तियों के अस्तित्व को भी मानता

था, जो मानव जीवन को संचालित करती हैं। तिब्बती मूल के इस विश्वास तंत्र ने बाद में तिब्बत में बौद्धधर्म की बज्रयान शाखा के विकास में योगदान दिया।[17]

जैसा कहा जा चुका है बौद्धों के लिए कैलास ध्यानी बुद्धों तथा बोधिसत्वों का विशाल मण्डल है। 1940 से पूर्व जब स्वामी प्रणवानंद ने पश्चिमी तिब्बती की अनेक यात्राएं की, तब तिब्बत में महायान बौद्ध धर्म की कम से कम 10 शाखाएं प्रचलन में थीं।[18] तिब्बत में बौद्ध धर्म की शुरूआत से ही उसकी विभिन्न शाखाओं ने अपने आप को कैलास पर्वत और मानसरोवर से जोड़ा और इस पवित्र भूगोल से जुड़ी कास्मोलॉजी का विकास हुआ। हिन्दू विश्वासों के अनुसार कैलास पर्वत (इसे अनेक किताबों में कैलासनाथ भी कहा गया है) में शिव, उनकी पत्नी गौरी, उनके दो पुत्र गणेश तथा कार्तिकेय तथा अन्य देवगण निवास करते हैं। शिखर के जड़ पर हनुमान विराजते हैं। हिन्दू समुदाय कैलास को कुबेर के अलावा अन्य अनेक देवताओं का निवास भी मानता है और इसे मेरु पर्वत या अन्तरिक्षीय (Cosmic) पर्वत कहते हैं। पौराणिक राजा मान्धाता महीपति का नाम गुरुला पर्वत से जुड़ा है, जो कि इस क्षेत्र का सर्वोच्च शिखर है। हिन्दू परम्परा में कैलास मानसरोवर की यात्रा को चार धाम (बद्री, केदार, गंगोत्री तथा यमुनोत्री) यात्रा (भारत) का पूरक तथा मुक्तिनाथ और पशुपतिनाथ (नेपाल) की यात्रा के विस्तार के रूप में विकसित माना जाता है।

जैन परम्परा में यह माना जाता है कि जैनों के प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ,[19] जिन्हें ऋषभदेव नाम से भी जाना जाता है, ने कैलास पर्वत के दक्षिणी ढाल में, वर्तमान घंगटा गोम्पा के पास (दारचिन के ऊपर), निर्वाण प्राप्त किया था। कैलास के दक्षिणी ढाल का यह स्थान 'अष्टपाद' कहलाता है। यह बताया जा चुका है कि गुरूनानक देव इस क्षेत्र में पहुंचे थे और उन्होंने बौद्ध सिद्धों से बातचीत भी की थी।[20] आज भी प्रत्येक प्रकार की कैलास परिक्रमा या प्रदक्षिणा तीर्थ यात्रा का आवश्यक भाग है। बोनपा समुदाय भिन्न दिशा से परिक्रमा करता है। यह भी बताना उचित होगा कि आन्तरिक कोरा यानी कैलास के भीतरी पथ की यात्रा कैलास की सम्पूर्ण परिक्रमा नहीं है। यह नन्दी पर्वत तक की यात्रा तथा वहाँ से वापसी है। तीर्थ यात्री आन्तरिक कोरा में नन्दी हिल तक जाकर या सरदुंग चुकसम (तेरह चोर्टन) से वापस लौट जाता है।[21]

इस पर्वतमाला ने एक विशिष्ट और नाजुक परिस्थितिकी को जन्म दिया, जो एशिया के विविध प्राकृतिक और सांस्कृतिक मिजाजों के सह अस्तित्व का मूल आधार बन गई।

संस्कृत में मानसरोवर के लिए बहुत से नाम हैं जैसे–अच्छोदसर, बिन्दुसर, पद्महृद, ब्रह्मसरोवर, हेमकूट तथा अनभतत्व। पाली भाषा में इसे अनोतत्व कहा गया है। तिब्बती चित्रों तथा थन्काओं में मानसरोवर तथा राकसताल सूरज तथा चाँद की तरह अभिव्यक्त किये गये हैं। जिनमें पहले को रोशनी की प्रकट शक्ति तो दूसरे को अंधकार की छुपी शक्ति का प्रतीक बताया गया है। इसीलिए मानसरोवर को चैतन्य सरोवर और राकसताल को राक्षसों का ताल कहा जाता है। यह भी कहानी है कि मानसरोवर की रचना स्वयं ब्रह्मा ने अपने मस्तिष्क से की। बहुत सारे और मिथक भी इन सरोवरों के बारे में प्रचलित हैं। रावण द्वारा राकसताल के किनारे की गई तपस्या की बहुत चर्चा होती है। मानसखण्ड में राकसताल (रावणह्रद) को 'लंकाह्रद' कहा गया है।[22] यह भी कहानी है कि एक सुनहरी मछली गंगाछ्यू से होकर मानस से राकस में गई।

अगर मिथकों से बाहर निकल प्राकृतिक–भौगोलिक वास्तविकता देखें तो शायद कभी मानस और राकस दोनों एक ही विशाल सरोवर का हिस्सा रहे होंगे। बहुत बाद में भूगर्भिक कारणों से इन दोनों के बीच वह धरती उभरी, जो आज दिखती है। गंगाछ्यू नामक एक चैनल दोनों तालों को जोड़ती है। बर्फ पिघलने के दौर में मानसरोवर का अतिरिक्त पानी इस चैनल से होकर राकसताल में जाता रहा है। अनेक बार इस चैनल में बहता हुआ पानी नहीं भी दिखता, क्योंकि तब वह भूमिगत होकर जाता है। राकसताल मानसरोवर से 50 फीट नीचे है। मानसखण्ड (स्कन्दपुराण का हिस्सा) से यह भौगोलिक सत्य भी उजागर होता है कि मानसह्रद और लंकाह्रद के बीच न सिर्फ 'विभीषणह्रद' तथा 'बिन्दुसर' सरोवर थे बल्कि 'परम पवित्र एवं पापनाशक 26 ह्रद' थे और इन सबमें भीतर से ही मानस का पानी जाता था।[23]

दूसरा भौगोलिक सत्य यह है कि कैलास शिखर के चारों तरफ का पानी सिर्फ राकसताल में जाता है। मानसरोवर में बिल्कुल भी नहीं। गुरुला पर्वत के उत्तरी ग्लेशियरों का पानी तथा कैलास रेंज के पूर्वी हिस्से का पानी अवश्य मानसरोवर में जाता है। पर अन्ततः मानसरोवर की प्राकृतिक ढाल राकसताल की तरफ है।■

■ साष्टांग प्रदक्षिणा

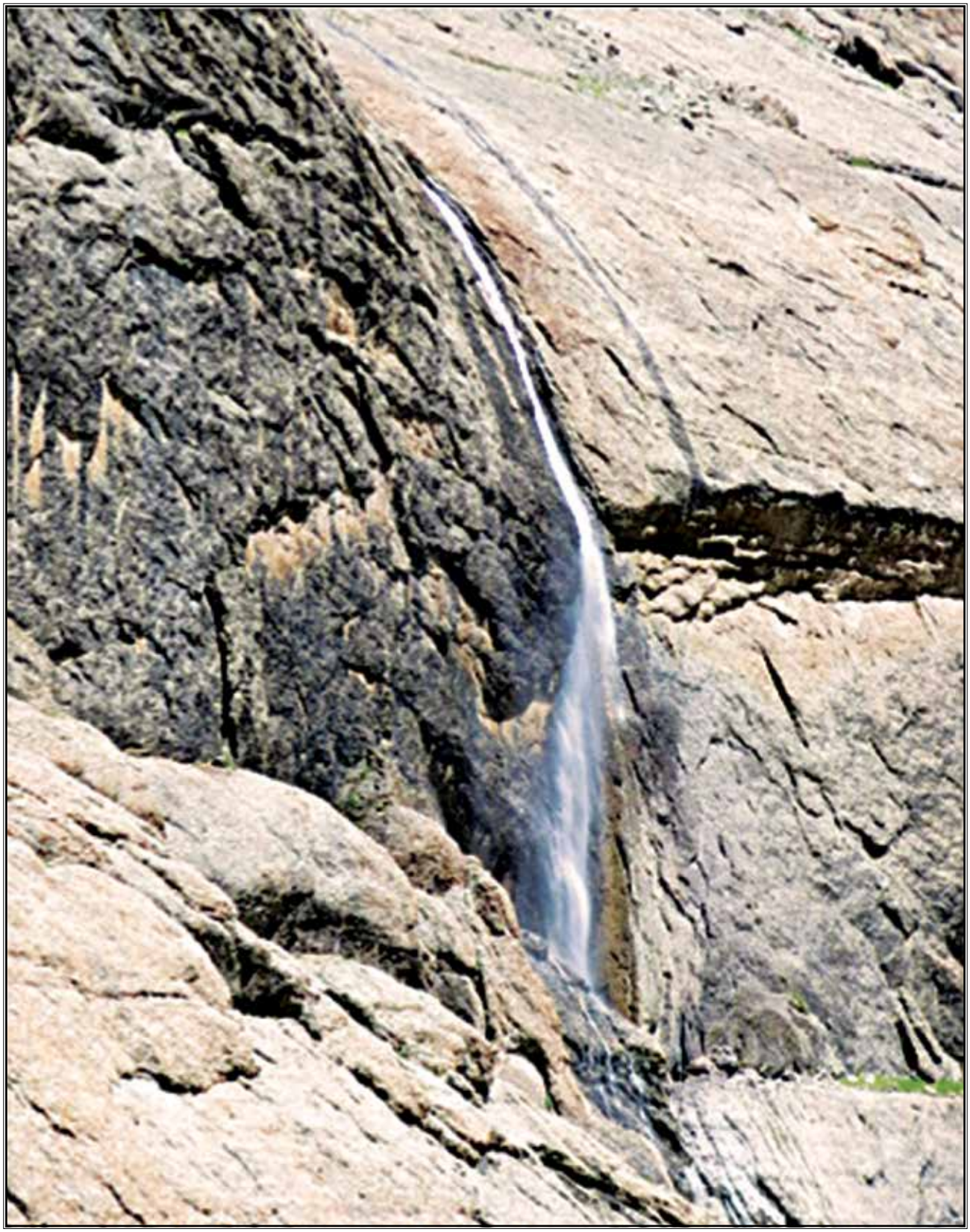

■ कैलास परिक्रमा पथ में झरना

3 भू–पारिस्थितिक आयाम

हम भारतीय उप महाद्वीप के वाशिन्दे कैलास पर्वत को दक्षिण से देखते हैं। हमारे लिये वह उत्तर में स्थित है। लद्दाख और ल्हासा के लोग इसे पश्चिम और पूर्व से देखते हैं। मंगोलिया और चीन–जापान के लोग इसे उत्तर तथा उत्तर–पूर्व से देखते हैं। इस तरह एशियाई संदर्भ में यह पर्वत भू–भौगोलिक तथा पारिस्थितिक रूप से केन्द्र में है। बिना हिमालय के बनने की कहानी को जाने हम कैलास क्षेत्र को इसके ऊपर स्थापित नहीं कर सकते। भू–वैज्ञानिकों के अनुसार हिमालय और कैलास क्षेत्र आज उस स्थान पर खड़े हैं, जो हिमालय के जन्म से पहले टैथिस नामक समन्दर ने घेरा था। भूगर्भीय ऊर्जा और हलचलों का हिमालय के बनने में निर्णायक योगदान रहा है। आज टैथिस हिमालय क्षेत्र बहुत कटा फटा, ऊबड़–खाबड़, तक्षित भूमि वाला और पूरी तरह निर्जन है। यह क्षेत्र 6 करोड़ साल पहले अवसादी चट्टानों से निर्मित हुआ। यह अवसाद टैथिस सागर का हिस्सा था। सुप्रसिद्ध भूवैज्ञानिक और हिमालय के अन्वेषकों में एक अगस्त गैनसर ने भूगर्भीय दृष्टि से कैलास पर्वत को विशिष्ट बताया है, क्योंकि 22 हजार फीट से ऊपर तक गये इस पर्वत में इसका स्तर क्षैतिजीय रूप में अक्षुब्ध बना हुआ है, बावजूद इसके कि यह अत्यधिक खड़े आधार शैल से घिरा है। इसके दक्षिणी बाजू में गैनसर को वे चट्टानें (Ophiolite) मिली, जो करोड़ों साल पहले मौजूद प्राचीन टैथिस सागर के तल में निर्मित हुई थीं। गैनसर के अध्ययन का सार निकलता है कि कैलास पर्वत हिमालय को बनते हुये, उठते हुये और टैथिस सागर को गुम होते हुये देख रहा था और स्वयं भी बनने की प्रक्रिया में था।[24]

सुप्रसिद्ध भूवैज्ञानिक खड्ग सिंह वल्दिया इसे और स्पष्टता से बताते हैं–

'हिमालय क्षेत्र मुख्य एशियाई भूमि के साथ वहाँ समाप्त होता है, जहाँ 30 से 60 किमी. चौड़े क्षेत्र में भारत भूमि एशियाई मुख्य भूमि से टकराती है। यह टकराहट साढ़े छः से पांच करोड़ साल पहले हुई। सिन्धु तथा सांगपो (ब्रह्मपुत्र) नदियाँ आज उस टकराहट के क्षेत्र में बहती हैं। यह क्षेत्र समुद्र तल से 3600 से 5000 मीटर उपर स्थित बहुत उदार स्थलाकृति वाला है और इसका निर्माण जैसे किसी नदी की बाढ़ से बने मैदानों ने किया हो।'

'इस टकराहट क्षेत्र के उत्तर में लद्दाख–कैलास और कराकोरम पर्वतमालाएँ हैं। लद्दाख–कैलास पर्वतमाला के पूर्व की ओर का प्रतिनिधित्व न्येचैनटांघला या गंगडेसे पर्वतमाला करती है, जो कि दक्षिण तिब्बत में स्थित है। उत्तर की तरफ कराकोरम है। यह पामीर पर्वतमाला पर समाप्त होता है, जो एक अलग ही तरह की भू–भौगोलिक गाठ है। ये पर्वत मेखला किसी पुराने पहाड़ी क्षेत्र की प्रतिनिधि हैं, जो हिमालय से बिल्कुल भिन्न रहा होगा। पवित्र कैलास पर्वत (6714 मी.) लाल बलुवा पत्थर तथा 2.7 करोड़ से 1 करोड़ साल पुराने कांग्लोमरेट से बना है, जो सिन्धु–सांगपो से पहले बहने वाली नदियों के प्रवाह क्षेत्र में पड़ा रहा होगा। कांग्लोमरेट की परतें कैलास ग्रेनाइट के ऊपर विराजमान हैं, जो 7 से 4 करोड़ साल पहले की बात है। न्येचैनटांघला–गंगडेसे मेखला का फैलाव दक्षिणपूर्वी दिशा में उत्तर पूर्वी लोहित जिले (अरुणाचल) तथा उससे भी दक्षिण में शान पठार–टेनासेरिन पर्वतमाला (म्यांमार) तक है।' [25]

■ काली नदी के दो तरफ भारत और नेपाल के कैलास पथ

आज यदि हम मानसरोवर और राकसताल को जोड़ने वाली गंगाछ्यू धारा के दाहिनी ओर स्थित छ्यू गोम्पा में खड़े होकर चारों तरफ देखें तो स्पष्ट ही लगता है कि हम इस विशाल रंगभूमि के बीच में खड़े हैं। यहाँ से उत्तर को देखें तो कैलास पर्वतमाला के बीच में दमकता कैलास शिखर दिखाई देता है, तो पीछे मुड़ दक्षिण को देखते ही गुरुला मान्धाता पर्वत के शिखर दिखाई देते हैं। बल्कि गुरुला के पीछे हिमालय के शिखर भी दिखाई देते हैं। इससे इन तीनों पर्वतमालाओं की समानान्तरता समझ में आती है। यहाँ से

पूरब को नजर फेरें तो सूर्याकार मानसरोवर की नीली सतह मोहित करती है और सरोवर का जलागम मायुम ला (दर्रे) तक चला जाता है, जो सतलज और सांगपो नदियों का जल विभाजक है। यहाँ से पश्चिम को देखें तो आधे चाँद की तरह पसरा हुआ राकसताल अपने दो द्वीपों के साथ दिखाई देता है। राकसताल अपने पूर्व में स्थित मानसरोवर के अतिरिक्त पानी को कभी सीधे और कभी भूमिगत रूप से प्राप्त करता है और इसी राकसताल से सतलज नदी का जन्म होता है, जिसमें सीधे कैलास रैंज से आने वाला पानी भी चला जाता है। जैसा कि कहा जा चुका है कैलास पर्वत के चारों तरफ का पानी ल्हा छ्यू और जांग छ्यू नदियों के मार्फत सिर्फ राकसताल में जाता है। आज भी कोई यात्री मानसरोवर और राकसताल की जल विभाजक धार को देख–पहचान सकता है। सिर्फ गंगा छ्यू इन तालों को जोड़ती है।

यदि हम गंगाछ्यू गोम्पा को केन्द्र मानकर लगभग 50 किमी. के अर्धव्यास का एकवृत्त खींचें तो इसी भूभाग से चार बड़ी नदियों का जन्म होता है, जो तिब्बत के विभिन्न हिस्सों से गुजरने के बाद उत्तरी भारत को जल और मिट्टी से सम्पन्न करती हैं। इन नदियों को बहुत प्रतीकात्मक नाम दिये गये हैं। पश्चिम को बहती है हस्तिमुखी लंगचेन खम्बाब (सतलुज, 1450 किमी.), उत्तर को सिंहमुखी सिंधी खम्बाब (सिन्धु, 3180 किमी.), पूर्व को अवश्वमुखी टमचोक खम्वाब यानी सांगपो/ब्रह्मपुत्र (2900 किमी.) और दक्षिण को बहती है मापचा खम्बाब यानी मयूरमुखी करनाली नदी (1080 किमी.)। यह भी याद रहे कि इनमें से कैलास के दक्षिणी ढालों, गुरूला के उत्तरी ढालों तथा मानसरोवर और राकसताल का पानी लेकर सिर्फ सतलज बहती है। ब्रह्मपुत्र मायुमला के पूर्व का, सिन्धु कैलास पर्वतमाला के उत्तर और करनाली गुरुला मान्धाता के दक्षिणी ढालों का पानी ले जाती है।

इस तरह इन चार नदियों में से दो सिन्धु जल प्रणाली की सर्वाधिक महत्वपूर्ण नदियाँ (सिन्धु और सतलुज) हैं। शेष दो नदियाँ गंगा और ब्रह्मपुत्र जल प्रणाली की तिब्बत के इस कोने से जन्म लेने वाली क्रमशः सहायक और मुख्य नदियां (करनाली और ब्रह्मपुत्र) हैं। ये तीन जल प्रणालियां भारत के भूगोल का 43.8 प्रतिशत भाग समेटती हैं और भारत के जल बजट का कुल 63 प्रतिशत इनसे बनता है। यद्यपि कैलास पवित्र भू क्षेत्र का उत्तराखण्ड में मौजूद हिस्सा गंगा के उत्तर पश्चिमी जलागम का निर्माण करता है लेकिन अगर दूरी के हिसाब से देखें तो इन चार नदियों के जन्मस्थानों से काली, गोरी, अलकनन्दा (सरस्वती, विष्णुगंगा तथा पश्चिमी धौली)

■ राकसताल

और भागीरथी या जाड़गंगा के स्रोत बहुत दूर नहीं हैं (हाल ही में रुड़की के केन्द्रीय जल विज्ञान संस्थान ने बताया कि मानसरोवर का पानी कहीं से भी गंगा नदी में नहीं आता है)।

कैलास क्षेत्र से जन्म लेने वाली ये चारों नदियां (और अन्य अनेक नदियाँ तिब्बत में इनसे मिलती हैं) अलग–अलग मार्गों और भूगोलों से होकर भारत में प्रवेश करती हैं। आप किसी नक्शे या गूगल अर्थ में जाकर इसे रोचकता से देख–समझ सकते हैं। सिन्धु उत्तर–पश्चिम में बहते हुये भारतीय लद्दाख से होकर आगे को निकलती है और नुब्रा, स्योक और काबुल नदी का पानी समेटकर पाकिस्तान के मैदानी हिस्सों (पंजाब–सिन्ध), जहां इसमें झेलम, चेनाव और सतलुज आदि नदियां मिलती हैं, से होकर कराची में समन्दर में समाती है।

कैलास–मानस क्षेत्र अनेक एशियाई समाजों के चेतन–अवचेतन में सदियों से धड़कता रहा है। एक हिम पर्वत और एक विशाल ताल की परिक्रमा में जैसे मनुष्य का तारण छिपा हो या इस अथवा उस जीवन की समग्र मुक्ति।

सांगपो तिब्बत में लगभग 1700 किमी. पूर्व–पूर्व दिशा में बहती है। हिमालय उसे उत्तरी भारत की ओर नहीं आने देता। शायद वह म्यांमार की ओर बह निकलने की सोचती होगी। देर से पर एकाएक हिमालय झुकता है और सांगपो एकदम दक्षिण–पश्चिम दिशा में मुड़कर अरुणाचल प्रदेश में प्रवेश करती है। इसी क्षेत्र में सांगपो के 'छिपे हुये झरने' (हिडन फाल्स) हैं। ये झरने प्रकृति की अपवाद रचनायें हैं। फिर यह नदी दिहांग और ब्रह्मपुत्र (लोहित भी) कहलाती है और सिक्किम, भूटान तथा पूर्वोत्तर भारत से आ रही नदियों (तीस्ता, मानस, धनसिरी आदि) के पानी को ले बंगलादेश होकर बंगाल की खाड़ी में समन्दर में समाहित हो जाती है।

करनाली दक्षिण को बहती है। ताकलाकोट से आगे बहकर हिल्सा नामक स्थान से यह नेपाल में प्रवेश करती है। नेपाल से बाहर निकल अवध में सरयू, फिर घाघरा बन बिहार में गंगा की मुख्य धारा से मिलती है। गंगा में कैलास क्षेत्र का पानी करनाली नदी ही लाती है। यों तिब्बत से सप्तकोसी और अरुण जैसी नदियां भी गंगा में शामिल होने आतीं हैं। सतलज पश्चिम की ओर बहकर तीर्थापुरी, थोलिंग आदि क्षेत्रों में अत्यन्त आकर्षक 'केनियन्स' और गर्म पानी के प्राकृतिक स्रोतों से होकर बहती है। यह बोनपा धर्म का मूल क्षेत्र माना जाता है।

फिर यह सिपकी ला से हिमाचल में प्रवेश करती है और स्पीती और बास्पा नदियों का पानी लेकर शिमला से उत्तर में बहकर पंजाब/पाकिस्तान की ओर जाती है। इसी में ब्यांस नदी मिलती है। आजादी के बाद इस नदी के पानी ने भाखड़ा–नांगल जलाशयों में ठहरना शुरू किया। फिर बिजली उत्पादित कर और सिंचाई हेतु पानी देकर यह पाकिस्तान की ओर प्रस्थान करती है।

नदियों की निचली घाटियों में रहने वाले समुदायों ने शायद इन सभी नदियों के ऊपरी जलागमों और कैलास क्षेत्र में उनके मूल स्रोतों को खोजा होगा। यह याद रखें कि सिन्धु (पंच नद या सप्त सिन्धु) तथा वैदिक सभ्यता के समय की कुछ नदियाँ कैलास क्षेत्र से आ रही हैं। नदियों के निचले क्षेत्रों के समाज जलागम के ऊपरी हिस्सों की असलियत से अधिक समय तक अनभिज्ञ नहीं रह सकते हैं। वेदों, महाकाव्यों और पुराणों में किया गया इस क्षेत्र का आंशिक और प्रारम्भिक वर्णन 'वास्तविक' से 'मिथकीय' ज्यादा था।[26] बाद में ये 'स्वर्गिक' पर्वत, सरोवर तथा नदियाँ पृथ्वी और इस क्षेत्र की वास्तविकता के रूप में सामने आईं, जब अधिक लोगों ने इनका सम्पूर्ण और प्रत्यक्ष दर्शन किया। विभिन्न समुदायों की गतिशीलता, आव्रजन, व्यापार और फिर तीर्थाटन ने कैलास मानस क्षेत्र की जटिल भौगोलिक वास्तविकता को समझा, जो तब तक 'पवित्र क्षेत्र' के रूप में उभर चुका था।

लेकिन कैलास क्षेत्र का उत्तरी भारत से पारिस्थितिक सम्बन्ध सदा प्राकृतिक बना रहा, चाहे लम्बे समय तक उत्तर भारतीय मैदानों के समाजों को इन नदियों के स्रोत प्रदेश की सम्पूर्ण जानकारी नहीं थी। इन नदियों ने मिट्टी, पानी और उर्वरता देकर उत्तरी भारत के मैदानों को एक विशिष्ट पारिस्थितिक क्षेत्र का रूप दे दिया। इन नदियों ने पश्चिमी तिब्बत को उत्तरी भारत के मैदानों से होकर बंगाल की खाड़ी और अरब सागर से जोड़ा। इन्हीं मैदानों में हड़प्पा सभ्यता और बाद में वैदिक संस्कृति का उदय हुआ था। बौद्ध और जैन धर्मों का उदय हुआ। सरस्वती नदी जब भी बहती होगी, उसकी कल्पना हिमालय के बिना सम्भव नहीं है। यह बताना उचित होगा कि इस रंगभूमि में विभिन्न लघु समाजों और संस्कृतियों के विकसित होने से बहुत पहले इन नदियों के द्वारा दक्षिण–पश्चिमी तिब्बत का पारिस्थितिक रिश्ता भारतीय उप महाद्वीप के उत्तरी मैदानों के साथ स्थापित हो चुका था। व्यापार और यात्रापथ बहुत बाद में विकसित हुये, जो इन नदियों के अलावा अगल–बगल के दर्रों से होकर भी जाते थे। हिमालय की गहरी पारिस्थितिक भूमिका को इस तथ्य से ज्यादा स्पष्टता से समझा जा सकता है कि यह मानसून को तिब्बत में नहीं जाने देता और मध्य एशिया की ठण्डी हवाओं को भारत में नहीं आने देता लेकिन तिब्बत की नदियों को जगह जगह झुककर यह भारतीय उपमहाद्वीप में उतरने देता है। इसी तरह मनुष्यों और अन्य जीव प्रजातियों के आवागमन हेतु यह नाके/दर्रे बनाता है।

मनुष्यों और उनके देवताओं के पहुँचने से पहले इस क्षेत्र में याक, कियांग (तिब्बती गधा), हिमचितुवा, कस्तूरी मृग, सघन बालों वाले तीन प्रकार के जंगली बकरे–थार, सराउ और भरल (ब्लू शीप), मारमोट और अनेक प्रकार की मछलियाँ और पक्षी कैलास मानसरोवर क्षेत्र की वन्यता और जैविक विविधता के हिस्सा बन चुके थे। परखा (बरखा) तथा अन्य मैदान (जैसे चांगथांग के चरागाह) वन्य जीवों के साथ–साथ घुमक्कड़–पशुचारक समाज के अस्तित्व को सम्भव बनाते रहे हैं। आज भी यह एक वास्तविकता है। मछलियाँ ही नहीं अन्य जन्तु और पक्षी प्रजातियाँ भी आदमी या राज्य व्यवस्थाओं द्वारा निर्मित राजनैतिक सीमाओं का उल्लंघन करती रही हैं। यह आज भी हो रहा है और 'सेपियन्स' की बनाई हुई सीमाओं को उनसे कम विकसित पर उनसे ज्यादा पुरानी प्रजातियाँ चुनौती देती आ रही हैं और इस प्राकृतिक साहस के कारण अनेक बार उन्हें अपनी जान खोने का खतरा भी उठाना पड़ता है।■

■ हिमालयी काष्ठ कला में शिव तथा पार्वती (हिमाचल)

4 अपवाद सांस्कृतिक परिदृश्य की रचना

'पवित्र' पर्वतों, सरोवरों और नदियों का विचार सभी पुरानी संस्कृतियों और धर्मों में उपस्थित रहा है। यह 'पवित्रता' हर तरह के भूगोलों में पाई गई है। पर्वतों को पिताओं और नदियों को माताओं की तरह देखा जाता रहा है।[27] अनेक अध्येताओं ने कैलास–मानसरोवर क्षेत्र के एक 'पवित्र भूमि' के रूप में जन्म और विकास का अध्ययन किया है। मैंने पहले कहा है कि किस तरह पशुचारकों याकि शिकारी–संग्राहकों के प्रारम्भिक समाज ने पहले पहल इस सौन्दर्य को देखा और इससे अपने को मोहित होता हुआ पाया। किन्ही 'मिथकों' के जन्म से पहले उन्होंने इन पर्वतों, तालों और जल धाराओं को 'पवित्र' मानना शुरू किया। यह एक तरह का प्रारम्भिक 'लोक धर्म' रहा होगा। या अनेक 'लोक धर्म' भी रहे हो सकते हैं, यदि आप इस सम्बोधन का इस्तेमाल करने की इजाजत मुझे दें। तत्कालीन समाज को प्रकृति के इन रूपों का काव्यमय वर्णन करने की या किसी धर्मग्रन्थ से प्रमाण पत्र पाने की जरूरत नहीं थी। यह एक धर्मविहीन (या संस्थागत धर्मविहीन) या प्रकृति पूजक समाज में बहुत स्वाभाविक था। संस्थानिक धर्मों के जन्म के साथ ही उनसे जुड़े अनेक देवी देवताओं को इस भूक्षेत्र के साथ जोड़ा जाने लगा।

ऐसा लगता है कि बोनपो या बोन धर्मावलम्बी और उनके पूर्वज समाज पहले समुदाय रहे होंगे जिन्होंने इस भूदृश्य के साथ अपने धर्म को जोड़ा। उनका जीवन और संस्कृति तो इस भूगोल से पहले ही जुड़ चुकी थी। स्वाभाविक ही बोन धर्म के संस्थापक टोनपा शेनरब मिनोचे पश्चिमी तिब्बत के पर्वतों और चट्टानों यानी इस समग्र परिवेश से गहन रूप से जुड़े थे। यह क्षेत्र शांग–शुंग कहलाता था। 7वीं सदी ईसवी तक बोनपो समुदाय ही इस क्षेत्र का अकेला अभिभावक–स्वामी था। उस समय उनको चुनौती देने वाला कोई और धार्मिक–सांस्कृतिक समुदाय न था। इस क्षेत्र से सम्बन्धित प्रारम्भिक अभिप्राय (मोटिफ), प्रतीक, मूर्तिशिल्प, अभिकल्पना (डिजाइन), ज्यामिती, रंग विन्यास आदि की प्रारम्भिक रचना और विकास का काम बोनपा समुदाय द्वारा किया गया। बोन धार्मिक–सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के अवशेषों को बाद की तिब्बती तथा हिमालयी संस्कृतियों के अभिप्रायों, प्रतीकों और अभिकल्पनाओं में पाया जा सकता है।

एलेक्स मैके ने कैलास–मानस क्षेत्र के 'कल्पित' से 'वास्तविक' तक की विकास कथा को विस्तार से प्रस्तुत किया है। इस रूपान्तरण का स्पष्ट सम्बन्ध विभिन्न समुदायों की गतिशीलता और उन समुदायों के अन्तर्सम्बन्धों के बढ़ने से था। बताया जाता है कि ऋग्वैदिक काल में रुद्र हिमालय के एक लघु देवता थे, जिन्होंने बाद में शक्तिशाली स्थान प्राप्त किया।[28] अथर्ववेद में 'बर्फीले पर्वत' (हिमालय) तथा सिन्धु नदी का जिक्र है।[29] प्रारम्भिक विवरणों में मेरु पर्वत को देवताओं का घर कहा गया था। बाद में 'मेरु' तथा 'सुमेरु' ऐसे दैवी और कल्पित

■ तिब्बती फूल

पर्वतों के रूप में चर्चित रहे, जो कभी कभी कैलास के लिए प्रयुक्त किये जाने लगे। वाल्मीकी रामायण[30] में रावण के मरने के बाद किये गये विलाप में मन्दोदरी कहती है कि कैसे वह अपने पति के साथ मन्दर तथा मेरु पर्वतों में गई थी।[31] स्कन्दपुराण के मानसखण्ड, रुद्रयमल तंत्र, सिद्ध सिद्धान्त पद्धति (गुरु गोरखनाथ कृत) तथा तुलसीदास कृत श्रीरामचरितमानस में कैलास तथा मेरु को अलग–अलग पर्वतों के रूप में वर्णित किया है।[32] तैत्रेय आरण्यक में 'महामेरु' सम्बोधन का इस्तेमाल आया है।[33] पर भौगोलिक रूप से उसकी संगत कैलास से नहीं बैठती है। ऐसा लगता है कि मेरु बाद में भारतीय कास्मोलॉजी के केन्द्र में आया। भगवतशरण उपाध्याय ने कालिदास साहित्य के साथ अन्य प्राचीन ग्रन्थों के विशद अध्ययन के बाद बताया है कि कैलास को पुराणों में 'कुबेर शैल' तथा 'एक पिंगलगिरि' भी कहा गया है। यह भी कि कालिदास ने कैलास, मेरु, मन्दर तथा सुमेरु पर्वतों का अलग अलग संदर्भ दिया है।[34] हिन्दू महाकाव्यों में गंगा, सरस्वती और यमुना का जिक्र है पर कैलास क्षेत्र से जन्म लेने वाली सिन्धु, सतलज, सांगपो

प्रकृति में आस्था को ढूढना हमारे पूर्वजों ने अर्सा पहले शुरू कर दिया था पर ऐसा नहीं सोचा गया होगा कि आगामी समय में जन्म लेने वाले धर्म भी इस प्रकृति से मुक्त नहीं हो पायेंगे।

■ मानसरोवर

और करनाली उनमें अनुपस्थित हैं।[35]

महाभारत और रामायण में कैलास के 'पवित्र क्षेत्र' बनने से पहले कदाचित कैलास–मानसरोवर की तीर्थयात्रा शुरू हो चुकी थी। इसका प्रमाण बौद्ध तथा जैन ग्रन्थों से मिलता है। धीरे–धीरे समय के आगे बढ़ने के साथ इस 'पवित्र क्षेत्र' के बारे में सामान्य जानकारी और ज्ञान में वृद्धि हुई। व्यापारी, प्रवास में आ–जा रही जनजातियाँ, सन्यासी (जिनमें तांत्रिक, सिद्ध तथा कीमियागर भी थे) आदि इस ज्ञान को बढ़ा रहे थे, जो प्रत्यक्ष अनुभवों पर आधारित था।[36] सुन्दर स्थानों में वह तत्व होते हैं जो उन्हें 'पवित्र' बना सकते हैं। उनमें वह शक्ति होती है जो मानव मन को गहराई से प्रभावित करती है। यही नहीं वह मनुष्यों द्वारा विकसित धर्मों को भी प्रभावित करते हैं। बौद्ध धर्म अनेक भारतीय अभिप्रायों, प्रतीकों और अभिकल्पनाओं के साथ तिब्बत में गया, जो वहां की चित्रकला, मूर्तिकला तथा स्थापत्यकला में प्रकट होती रही हैं। इस तरह पूर्व बौद्ध तिब्बती कलाओं का सामना और समन्वय भारतीय कला विधाओं से हुआ।

इनमें से अनेक मोटिफ उस समय हिन्दू धर्म में प्रचलित मोटिफों से मिलते–जुलते थे। हिन्दू धर्म के कुछ प्रतीकों और देवी–देवताओं ने तिब्बती बौद्ध देव अनुक्रम में स्थान पाया क्योंकि बौद्ध प्रचारक तथा कलाकार भारत से गये थे। तिब्बती बौद्धधर्म के अधिकांश देवी–देवता, अपने हिन्दू प्रतिरूपों से मिलते जुलते हैं। इन हिन्दू देवी देवताओं से सम्बद्ध पशु–पक्षी तिब्बती बौद्ध कलाकारों ने स्वीकारे और चित्रित किये। तिब्बती तंत्रवाद का प्रभाव भी विभिन्न गोम्पाओं की संस्थानिक अभिव्यक्ति में दिखाई देता है। अनेक भारतीय गुरु तिब्बत गये और उनमें से कुछ ने उच्चस्थ स्थान प्राप्त किया। इनमें सर्वाधिक प्रसिद्ध गुरु पद्मसम्भव (मणिपद्म) हैं। तिब्बती बौद्धधर्म में बुद्ध के बाद उनका ही नाम–स्थान है।

इसके साथ ही 'अनेक कैलास' या 'बहु कैलास' का विचार भी विकसित हुआ। वे लोग जो कैलास मानसरोवर क्षेत्र से दूर थे या वहां जाने में असमर्थ थे, उन्होंने अपने अपने क्षेत्रों में 'स्थानीय कैलास' स्थापित और विकसित किये। यह भाव पर्वत या स्थान के अलावा लोक साहित्य, स्थापत्य और मूर्तिकला में भी अभिव्यक्त हुआ। भारत देश के उत्तराखण्ड में छोटा या आदि कैलास (कुटी घाटी, पिथौरागढ़), श्री कैलास (गंगोत्री क्षेत्र, उत्तरकाशी)[37] तथा भुरकनियाँ कैलास (भीमताल, नैनीताल), हिमाचल में मणि महेश कैलास (भरमौर, चम्बा), श्रीखण्ड कैलास तथा किन्नर कैलास (किन्नौर) इस तरह की सांस्कृतिक सृजनशीलता के उदाहरण हैं। नन्दादेवी का ससुराल कैलास में है। उत्तराखण्ड के लोक गीतों में 'कविलास' के रूप में कैलास की चर्चा होती रही है। नन्दाजात भी एक प्रकार की परिक्रमा ही है। किन्नर कैलास में प्रदक्षिणा की परम्परा है। नेपाल में काठमाण्डू के पशुपतिनाथ मन्दिर के उत्तर में स्थित एक पर्वत को कैलास कहा जाता है।[38] इसी तरह नेपाल की करनाली घाटी के हुम्ला जिले के तुमकोट के पास स्थित खिरपानी भी एक पवित्र पर्वत है, जिसे कैलास का प्रतिरूप माना जाता है।[39] यह कुछ समय बर्फ से भी ढक जाता है। इसकी पूजा और प्रदक्षिणा/परिक्रमा स्थानीय समुदायों द्वारा की जाती है।

स्थापत्य और मूर्तिकला में भी कैलास को अभिव्यक्त होने का मौका मिला। किसी शोधार्थी द्वारा इसका विस्तृत अध्ययन किया जाना चाहिये। धीरे धीरे सदियों में कैलास पर्वत तथा मानसरोवर भारतीय स्थापत्यकला, मूर्तिकला तथा चित्रकला का विषय बन गये। अनेक क्षेत्रीय कला घरानों में ये दोनों प्रतीक महत्व पाते गये। भारतीय कलाओं में शिव के अधिक चर्चित होने से भी कैलास तथा मानसरोवर को केन्द्र में आने का मौका मिला। कैलास के नाम पर मंदिर भी बनने शुरू हुये। चट्टान काटकर बनाया गया अजन्ता का कैलासनाथ मंदिर इसका सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण है।[40] कैलास पर्वत को उठाते रावण की बीस भुजाओं वाली मूर्ति विरुपक्ष मंदिर, पट्टाडाकल्लू (धारवाड़), कर्नाटक में आज भी सतत आकर्षण का केन्द्र बनी हुई है। महाबलीपुरम के रॉक कट टैम्पल (पत्थर में उकेरे चित्रों से भरी यह चट्टान 100 X 40 फीट आकार की है) में एक पैर में खड़ा अर्जुन कैलास पर्वत के सामने शिवजी की तपस्या कर रहा है। इस भाव की सैकड़ों मूर्तियां देश भर में बिखरी मिल सकती हैं। बाद में तत्सम्बंधी कहानियां पहाड़ी चित्रकला में भी अभिव्यक्त होती रहीं।[41] तिब्बती चित्रों तथा थन्काओं में कैलास–मानस तथा तत्सम्बंधी कहानियां पहले ही महत्व पा चुकीं थीं।■

5 औपनिवेशिक ऊँची कूद

तिब्बत और विशेष रूप से कैलास परिक्षेत्र के संदर्भ में औपनिवेशिक साम्राज्यवादी ऊँची कूद अत्यन्त रोचक है। यह आज के संदर्भ को समझने के लिए भी बहुत महत्वपूर्ण है। अतः इसकी कुछ पड़ताल की जानी चाहिए। औपनिवेशिक शासन के लिए हिमालय के द्वारों के खुलने की पराकाष्ठा तिब्बत तथा मध्य एशिया तक औपनिवेशिक शासन के प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से पहुँचने में हुई। यह प्रत्यक्ष शासन नहीं, पर लाभदायक प्रभाव था।

पूर्व औपनिवेशिक एशिया में शुरू हुई यूरोपीय यात्राएं ईस्ट इंडिया कम्पनी के भारत आगमन और जैसुईट पादरियों के साथ शुरू होती है। जहाँ ईस्ट इंडिया कम्पनी का सम्बन्ध व्यापार और पारगमन से था वहीं जैसुईट पादरियों के मन में धर्म प्रसार और भौगोलिक अन्वेषण का संयुक्त उद्देश्य था। जैसुइट पादरियों ने अपने को एशिया के प्रथम आधुनिक अन्वेषकों के रूप में स्थापित किया। उनके योगदान पर अब पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है।

पर ईस्ट इंडिया कम्पनी के आगमन के साथ ऐतिहासिक दिशा कुछ बदली–विशेष रूप से 1757 की प्लासी की लड़ाई के बाद। अब ईस्ट इंडिया कम्पनी सिर्फ व्यापारिक कम्पनी न थी, यह एक राजनैतिक शक्ति बनने जा रही थी। इसके बाद की दो संस्थाओं की स्थापना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। 1767 में सर्वे ऑव इंडिया (रॉयल ज्योग्राफिकल सोसायटी की स्थापना से 63 साल पहले) और

■ करनाली (नेपाल)

1802 में ग्रेट ट्रिग्नोमेट्रिकल सर्वे की स्थापना। इनके मध्य और बाद अनेक खोजी सर्वे अभियान हिमालय के विभिन्न क्षेत्रों में और हिमालयी मार्गों से तिब्बत और मध्य एशिया में भेजे गये।[42]

यह रोचक तथ्य बताना उचित होगा कि 1624 में उत्तराखण्ड के हिमालयी माणा दर्रे को पार कर छपरांङ (पश्चिमी तिब्बत) जाने वाले जैसुईट पादरी अन्तोनियो अन्द्रादे और इमैन्युअल मारक्युज थे, जो 'खोये हुये ईसाई भाईयों' की खोज में वहाँ गये थे। वे आमंत्रित किये जाने के बावजूद मुगल बादशाह जहांगीर के साथ कश्मीर न जाकर कुम्भ मेले में हरद्वार आये। फिर आगे बढ़े। उन्होंने 1625 में पुनः छपरांङ यात्रा की। अप्रैल 1626 में वे पश्चिम तिब्बत में पहला चर्च स्थापित करने लगे थे। चर्च स्थापित हुआ और कुछ तिब्बतियों ने ईसाई धर्म स्वीकार भी किया। यद्यपि एक विद्रोह के कारण यह प्रक्रिया सतत नहीं चली।[43] यह छपरांग दरअसल वही शांग शुंग देश था, जहाँ एक दौर में बोन धर्म का दबदबा था।

वर्तमान में कैलास के बोन प्रतीकों को अलग से ढूंढ पाना कठिन है पर सामान्यतया यह माना जाता है कि 'नौ मंजिले स्वस्तिक' का विचार बोन परम्परा से ही आया है।

यद्यपि कुछ अन्य जैसुईट पादरी तिब्बत में इससे पहले या साथ–साथ पहुँच चुके थे। जैसे 1603–07 के बीच बेन्टो डी गोज लाहौर से तिब्बत होकर चीन गया था। इसी तरह

■ गौरी कुण्ड

1627–31 में स्टीफन सेसिला और जॉन कैबराल बंगाल से सिगात्से (तिब्बत) गये थे।[44] यूरोप को तिब्बत की प्रारम्भिक जानकारी देने वाले पहले लोग ये जैसुईट पादरी ही थे। फिर कुछ लम्बी अवधि तक चुप्पी रही। 1715 में जैसुईट पादरी इप्पोलीटो देसीदेरी और इमैन्युअल फ्रेयरे कश्मीर से ल्हासा जाते हुए कैलास पर्वत के पास से गुजरे थे। कैलास के धार्मिक महत्व की चर्चा करते हुये भी वे इस पर्वत का नाम नहीं दे पाये थे। इन पादरियों के 97 साल बाद 1812 में जिस अंग्रेज पशु चिकित्सक ने नीति दर्रा पार कर मानसरोवर, राकसताल और कैलास पर्वत को साक्षात देखा वह विलियम मूरक्रोफ्ट था। उसके साथ हैदर जंग हेयरसे था। उसने Kailas को Cailas लिखा था और यह भी बताया था कि तीर्थयात्री इसे 'महादेव का लिंग' सम्बोधित करते थे।

मूरक्रोफ्ट ने कैलास परिक्रमा/प्रदक्षिणा की विधि का वर्णन किया है। वह पहला अन्वेषक था जिसने यह बताया कि राकसताल से निकले पानी और कैलास पर्वत से आने वाली एक धारा से सतलज नदी बनती है। उसने यह भी पाया कि मानसरोवर से निकलने वाली एक मात्र चैनल (गंगाछ्यू) राकसताल में समाहित होती है। कभी उसमें पानी नजर आता है और कभी नहीं।[45] मूरक्रोफ्ट की यात्रा के तीन साल बाद 1815 में नेपाली शासकों और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच युद्ध हुआ और सिगौली की संधि के साथ कैलास मानसरोवर की तीर्थ यात्रा और भारत–तिब्बत व्यापार के संदर्भ में एक नया युग शुरू हुआ।

■ कैलास ग्लेशियर के नीचे मुस्कुराती वनस्पति

कभी मानस और राकस दोनों एक ही विशाल सरोवर का हिस्सा रहे होंगे। बहुत बाद में भूगर्भिक कारणों से इन दोनों के बीच वह धरती उभरी, जो आज दिखती है। गंगाछ्यू चैनल दोनों तालों को जोड़ती है।

**

कुमाऊं कमिश्नर जॉर्ज विलियम ट्रेल ने 1825 के आसपास कुमाऊं के तिब्बती सीमान्त तक की यात्रा की थी। यह माना जाता है कि वह तिब्बत नहीं जा सका था। पहले पहल इधर से सितम्बर–अक्टूबर 1846 में लैफ्टिनेंट हेनरी स्ट्रेची[46] ने कैलास क्षेत्र की यात्रा की और वहां का विस्तृत वर्णन छोड़ा। 1848 में रिचर्ड स्ट्रेची[47] ने वहां की यात्रा की। 1849 में दोनों भाई कैलास क्षेत्र में गये और नीती दर्रे से वापस आये। 1855 में एडमण्ड स्मिथ तथा राबर्ट ड्रमण्ड ने पहली बार मानसरोवर में नाव चलाई।[48] 1864 में स्मिथ, थॉमस वैबर पुनः इस क्षेत्र में गये।[49] इन यात्राओं से कैलास मानसरोवर की चर्चा रॉयल ज्योग्राफिकल सोसायटी या इंग्लैण्ड तक ही नहीं पूरे यूरोप तक जा रही थी। छपराङ क्षेत्र में सितम्बर–अक्टूबर 1855 में जर्मनी से भारत में अन्वेषण कार्य के लिये आये तीन भाइयों में से दो अडोल्फ तथा राबर्ट स्लागिन्टवाइट भी गये थे।[50] 1903 में टाम लोंगस्टाफ गुरुला पर्वत पर गये। इस यात्रा में उनके साथ अलमोड़े के तत्कालीन डिप्टी कमिश्नर चार्ल्स शेरिंग थे, तो 1912 में एक आइ.सी.एस. अधिकारी जी.एम. यंग छपराङ गये।[51] औपनिवेशिक काल में पहले ईस्ट इंडिया कम्पनी के अन्तर्गत फिर साम्राज्ञी के सीधे शासन में भारत तिब्बत व्यापार तथा कैलास मानसरोवर यात्रा के संदर्भ में कुछ नये कदम उठाये गये। इस क्षेत्र में जाने वाले विभिन्न महत्वपूर्ण यात्रियों की लम्बी सूची बनाई जा सकती है[52], जो अभी अभीष्ट नहीं है।

1903 के फ्रांसिस यंगहजबैण्ड मिशन के बाद तिब्बत का अलग और बंद क्षेत्र रहना सम्भव न था। व्यापार का कार्य तिब्बती डकैतों को नियंत्रित न कर पाने के बावजूद चल रहा था। 1930–40 के बीच स्वामी प्रणवानन्द, नारायण स्वामी या गीता स्वामी के प्रयासों से तीर्थयात्रा का सुव्यवस्थित सिलसिला चला। प्रणवानन्द भूगोलविद थे, नारायण स्वामी समाज सेवक और शिक्षक तथा गीता स्वामी पूरी तरह कैलास तथा अन्य तीर्थयात्राओं के प्रबन्धक थे। गीता स्वामी ने नैनीताल से इस कार्य का संचालन किया और नारायण स्वामी ने सोसा से। प्रणवानन्द का व्यापक परिचय क्षेत्र था। तीर्थयात्रा के इस सिलसिले में शौका समुदाय का महत्वपूर्ण सहयोग था। यह प्रक्रिया तिब्बत के चीनी अधिग्रहण (1948) तक चलती रही। फिर इसमें सुस्ती आई। 1959 में दलाई लामा के ल्हासा छोड़ने, 1960 में तिब्बत व्यापार और तीर्थयात्रा के रुक जाने और 1962 के भारत–चीन युद्ध के बाद सदियों पुराने सिलसिले का एकाएक अंत हो गया।[53] फिर 1980 के बाद नई शुरूआत हुई तो बहुत नियंत्रित और नयी तरह से। 1981 में लीपूलेख दर्रे के बाद 2015 में लाथू ला (सिक्किम) से कैलास मानसरोवर जाने की व्यवस्था शुरू हुई। तिब्बत को चीनियों ने अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटकों के लिए खोला और नेपाल होकर बड़ी संख्या में भारतीय तीर्थयात्री (कोदारी तथा हुमला होकर) कैलास मानसरोवर क्षेत्र में जाने लगे।■

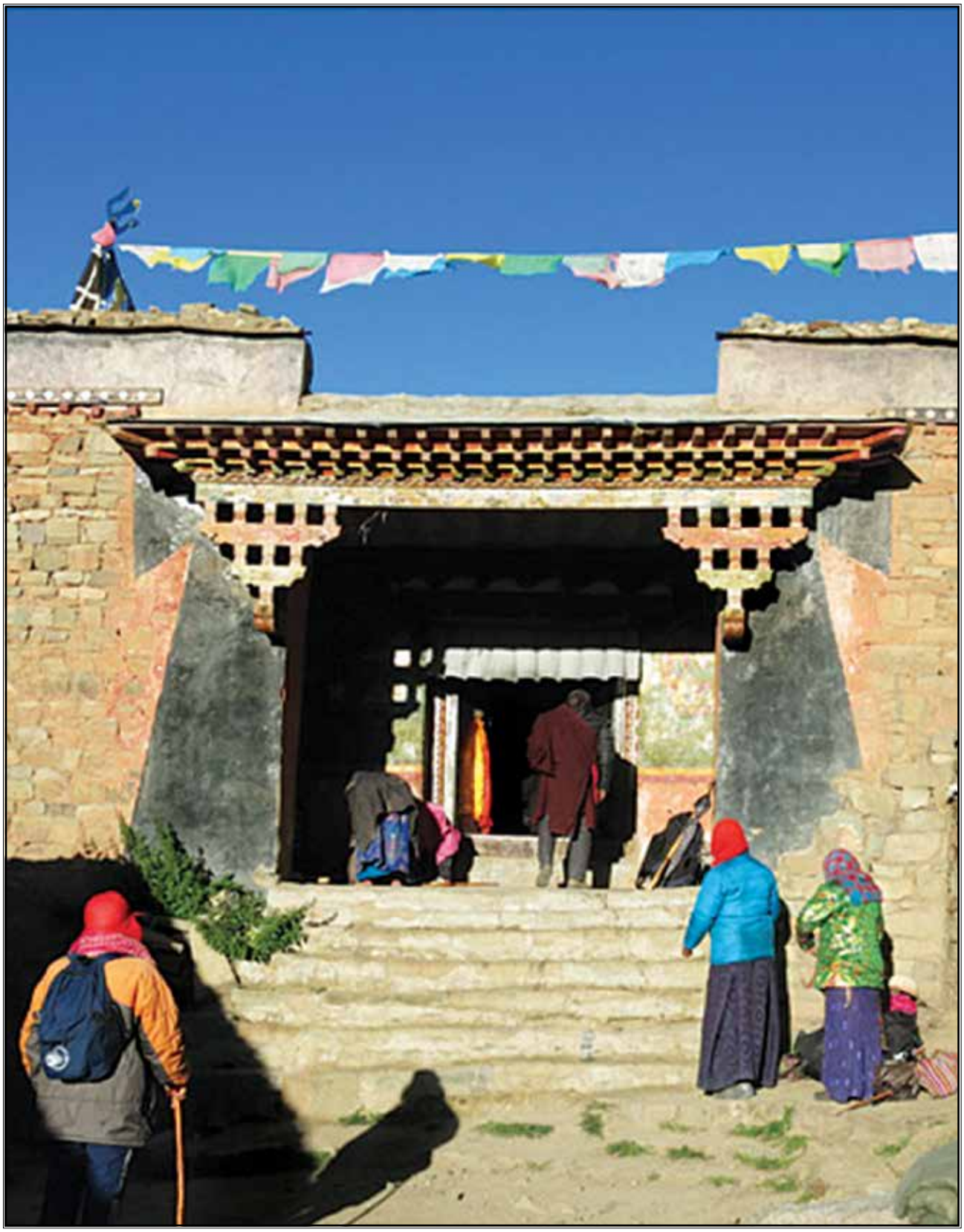

■ जुटुलपुक गोम्पा

6 आर्थिक पक्ष

इस वक्तव्य में सच्चाई है कि कैलास मानसरोवर क्षेत्र की ओर सबसे पहले ध्यान खींचने का काम 'देवताओं' ने नहीं 'सोने' ने किया।[54] मनुष्य की मूल अन्वेषण भावना भी इसके पीछे रही होगी। अनेक विद्वान यह भी कहते हैं कि इस क्षेत्र की तीर्थयात्रा से पुरानी इस क्षेत्र में होने वाले वस्तु विनिमय (व्यापार) की कहानी है। यह सच्चाई के करीब लगता है क्योंकि कम संख्या में ही सही पर मध्य एशिया, लद्दाख, कश्मीर, हिमाचल, उत्तराखण्ड, नेपाल, भूटान आदि के व्यापारियों ने कैलास क्षेत्र में आना शुरू किया। यहां से होकर व्यापारी कारवां गुजरते थे। वस्तु विनिमय की यह परम्परा कम से कम ढाई हजार साल पीछे तक अतीत में खोजी जा सकती है।

श्रेष्ठ धातु सोने से लेकर सर्वाधिक मामूली पर अत्यन्त जरूरी खनिज नमक के अलावा ऊन, सुहागा, कस्तूरी के बीड़े, चंवर पूंछ, जड़ी–बूटियाँ, खनिज औषधि, खालें, पंख और जीवित पशु (याक, घोड़े, बकरी, भेड़ आदि) हिमालय पारीय व्यापार के विभिन्न सामान थे, जिनका विनिमय अनाज (चावल, दाल) आटे, सूखी सब्जियाँ, गुड़, धातु बर्तन, कपड़ा, लकड़ी के बर्तन (पुरू/फुरू) तथा स्थान विशेष के उत्पादों के साथ किया जाता था।[55]

कैलास पर्वत हिमालय को बनते हुये, उठते हुये और टैथिस सागर को गुम होते हुये देख रहा था और स्वयं भी बनने की प्रक्रिया में था

■ सिन्धु जन्सकार संगम (लद्दाख)

कैलास मानस क्षेत्र के विभिन्न धर्मों और संस्कृतियों के संयुक्त गन्तव्य के रूप में उदय के साथ इस क्षेत्र में अनेक मंडियों और व्यापार का विकास पिछली अनेक सदियों में विकसित मानवीय उद्यम और धार्मिक–आध्यात्मिक खोज का अत्यन्त आकर्षक इतिहास है। यहाँ धर्म, संस्कृति और आर्थिकी एक–दूसरे में समाहित हो गये हैं। भारतीय उपमहाद्वीप से जाने वाले उत्तरमुखी सीधे जाने वाले व्यापार मार्ग तिब्बती व्यापारियों के माध्यम से सीधे या अप्रत्यक्ष रेशम मार्ग से भी जुड़ते थे। एक रोचक बात और है कि भारत और नेपाल के पशुचारक और खेतीहर समाजों के सदस्य भी उच्च हिमालय तथा तिब्बत में घुमन्तू मौसमी प्रवास में शामिल होते रहे हैं। ये समुदाय तिब्बती घूमन्तू पशुचारकों से सर्वथा भिन्न होते हैं। मध्य पश्चिमी तिब्बत में पशुचारण इस भूगोल के स्वभाव की तरह है लेकिन इसके साथ जुड़े कुटीर उद्योग और वस्तुविनिमय व्यापार इस क्षेत्र में कठिन आर्थिकी और अस्तित्व को बनाये रखने की समझ भरी स्वाभाविक कोशिश कही जा सकती है।

मध्यकाल में हिमालय पारीय व्यापार का विस्तार हुआ और 1815 में ईस्ट इंडिया कम्पनी के आगमन के बाद उत्तराखण्ड और हिमाचल में इसका और विकास हुआ। यह तथ्य भी याद रखना होगा कि तिब्बत फिरंगियों (यूरोपीय) के लिए बन्द था। सिर्फ हिमालयी समुदायों को कुछ मंडियों में आने की स्वीकृति वस्तुविनिमय हेतु मिली थी। यह प्रक्रिया बीसवीं सदी के प्रारम्भ में तब अप्रत्याशित ऊँचाई तक पहुँची जब लार्ड कर्जन के समय (1903) ल्हासा पर औपनिवेशिक हमला हुआ और ब्रिटिश शासकों द्वारा हिमालयपारीय व्यापार पर एकाधिकार प्राप्त कर लिया गया।[56] तिब्बत का इंग्लैण्ड तथा अन्य यूरोपीय देशों के लिये खुलना हिमालयी–तिब्बती इतिहास का एक नया और महत्वपूर्ण अध्याय था।[57]

कुमाऊँ (चन्द), गढ़वाल (पँवार), कश्मीर (डोगरा) तथा नेपाल (गोरखा) के शासक विभिन्न समयों में पश्चिमी तिब्बत में घुसपैठ करते रहे और कुछ भागों पर अधिकार करने में कामयाब रहे। यह लम्बे समय तक हिमालयी शासकों के मन में मौजूद रही प्रच्छन्न इच्छा कही जा सकती है। पर इनमें से कोई भी शासक तिब्बत में अधिकार किये गये क्षेत्र को राजनैतिक रूप से अपने नियंत्रण में नहीं रख सका। पश्चिमी तिब्बत में ताकलाकोट तथा डाबा में जीत के बावजूद कुमाऊँ और गढ़वाल के शासकों का लौटना तथा डोगरा सेनापति जोरावर सिंह का पश्चिमी तिब्बत में त्रासद अन्त

या टिंगरी/सेगर क्षेत्र से नेपाली सेना का वापस आना हमें स्पष्ट रूप से बता देता है कि किसी बाहरी शासक के लिए तिब्बत में राजनैतिक स्थाईत्व पाना असम्भव था। जोरावर ने जरूर जद्दाख (लिटिल तिब्बत) को कश्मीर के साथ जोड़ दिया। यह भी सच है कि शक्तिशाली चीन को तिब्बत के भीतर लगातार विरोध झेलने पड़ रहे हैं।

चंद राजा बाजबहादुर चंद (1638–78) ने ताकलाकोट (पुलन/पुरंग) में 1670 में हमला किया था ताकि व्यापारिक गतिविधियाँ बढ़ाई जाय और व्यापार मार्गों को हुमली, जुमली और तिब्बती आक्रमणों से मुक्त और सुरक्षित किया जाय।[58] इससे पूर्व लक्ष्मीचन्द (1597–1621) ने ऊपरी दारमा के लोगों को लाकर उजड़े हुए रालम गाँव को फिर बसाया था।[59] रालम के लोग दारमा दर्रे से होकर ज्ञानिमा मंडी जाया करते थे। पँवार शासक श्याम शाह (1631–1635) ने डाबा पर हमला किया क्योंकि यहाँ के स्थानीय लुटेरे गढ़वाल के पैनखण्डा तथा दशौली क्षेत्र के गाँवों में लगातार हमलाकर लूटपाट करते रहे थे। महीपति शाह ने डाबा में विजय प्राप्त की पर उसके द्वारा वहाँ नियुक्त बर्त्वाल भाईयों की हत्या कर दी गई। फिर उसकी सेना पराजित हो गई और जाड़ों में वहां अधिकांश गढ़वाली सैनिक मारे गये।[60] यही कीमत 19वीं सदी में जोरावर सिंह ने चुकाई–पहली बार पराजित होकर और अपनी जान देकर।[61] उसके सहायक बस्तीराम तथा अन्य सैनिक लीपूलेक के रास्ते अस्कोट आये। उनकी तलवारें अस्कोट रजबार के यहां देखी जा सकती हैं।

■ लखनपुर (कालीघाटी) में भूस्खलन

इन नदियों ने मिट्टी, पानी और उर्वरता देकर उत्तरी भारत के मैदानों को एक विशिष्ट पारिस्थितिक क्षेत्र का रूप दे दिया।

अब कैलास क्षेत्र के मठों के बहु स्वामित्व की चर्चा। यह बताना रोचक होगा कि बिना सैन्य अभियानों के ही कैलास क्षेत्र के कुछ गोम्पा (मठ) लद्दाख और भूटान के शासकों द्वारा प्रशासित रहे। कैलास का पहला मठ न्येनरी, दारचिन गोम्पा तथा जुटुकपुक गोम्पा महाराजा भूटान के संरक्षण में थे। चीन की सांस्कृतिक क्रान्ति के दौर में ये गोम्पा ध्वस्त किये गये थे। 1980 के बाद इनका पुनर्निर्माण किया जाने लगा।[62] ध्वंश और अब पुनर्निर्माण के दृश्य बीसवी सदी के अंतिम सालों और इक्कीसवीं सदी में अनेक यात्रियों ने तिब्बत में देखे। एफ. विलियमसन, जो कि सिक्किम में राजनैतिक अधिकारी था, ने 6 जनवरी 1934 को लिखा था–

'कैलास सहित दारचिन क्षेत्र को कुछ शताब्दी पहले लद्दाख के शासक द्वारा भूटान को दिया गया था। इस अधिकार दान को पिछले किसी दलाईलामा ने प्रमाणित किया था। वह शायद पाँचवा दलाईलामा था। हस्तान्तरण का यह प्रमाण पत्र महाराजा भूटान के पास है। तिब्बती कलेण्डर साठ साल के चक्र में चलता है। अतः उस दस्तावेज की तिथि निकालना कठिन है। दस्तावेज की प्रति मेरे पास भी है, जिसे मैंने अपनी पिछली भूटान यात्रा में प्राप्त किया था।' [63]

विलियमसन इस पर फिर लिखते हैं कि 1921 में यह एक चर्चा का विषय बना था पर दारचिन के स्वामित्व की या कानूनी स्थिति स्पष्टता से परिभाषित नहीं थी। पिछले कुछ सालों में दारचिन के गोम्पा का पुनर्निर्माण किया गया है। पर भूटानी प्रतिनिधि के आवास का भवन खण्डहर बन गया है। जिसे आज भी देखा जा सकता है।

शौका (भोटिया) समुदाय अपने मौसमी प्रवास और आव्रजन के साथ हिमालयपारीय व्यापार में हिस्सेदारी करता रहा था। शौका समुदाय का मौसमी प्रवास स्पष्टतः आंशिक खेती, पशुचारण, कुटीर उद्योग तथा व्यापार से जुड़ा था। धीरे–धीरे शौका समुदाय हिमालयपारीय व्यापार के सर्वेसर्वा बन गये और फिर कैलास मानसरोवर तीर्थयात्रा के भी। इस तरह उन्होंने दो भिन्न इलाकों के तमाम उत्पादों के वस्तुविनिमय के मार्फत उत्तरी भारत के मैदानों की समाज–आर्थिकी को तिब्बती पठार से जोड़ दिया। इस वस्तुविनिमय ने न सिर्फ उत्तराखण्ड, नेपाल और पश्चिमी तिब्बत के निवासियों को आर्थिक–सांस्कृतिक रूप से जोड़ा बल्कि इस विशाल क्षेत्र के अन्य समुदायों को भी। शताब्दियों तक शौका समुदाय इस क्षेत्र के तमाम समुदायों के बीच अत्यन्त रचनात्मक सम्पर्क सूत्र बने रहे और इस प्रक्रिया में उनकी मदद अणवाल (पशुचारक), भूरी (नौकर), मिरासी (गायक) तथा टहलुवा (मददगार शिल्पी) करते रहे।[64]

गोरखा शासन (1790–1815) के दौर में हिमालयपारीय व्यापार मेंनकात्मक असर पड़ा। तीन प्रकार के शासकों–गोरखा, जुमली–हुमली और तिब्बती–को साथ–साथ टैक्स देने के बावजूद यह वस्तु विनिमय व्यापार चलता रहा क्योंकि इसका कोई सरल विकल्प न था और इसके साथ तमाम दिखने और न दिखने वाली प्रक्रियाएँ भी चलती रही। यह तिब्बत के लिये भी जरूरी था और हिमालयी राज्यों के लिये भी।■

7 व्यापार पर एक नजर

अब उन्नीसवीं–बीसवीं सदियों के तीन समयों पर हिमालयपारीय व्यापार की मात्रा देखने की कोशिश करते हैं। जॉर्ज विलियम ट्रेल ने अपनी पहली रपट में निर्यात सामग्री में मिश्री, मशाले, यूरोपीय कपड़ा तथा मूंगा को तथा आयात सामग्री में शॉल का ऊन, सामान्य ऊन, चीनी रेशम, केशर, चमड़ा/खालें तथा घोड़ों को प्रमुख बताया था।[65] इनमें नमक या सोहागे की चर्चा नहीं की थी। इस रपट में जोहार के पुकासाओ (पाछू) नामक सदावर्त गांव का जिक्र है, जिससे प्राप्त आय/अन्न कैलास–मानसरोवर के यात्रियों के लिये इस्तेमाल होता था।[66] पर ट्रेल की दूसरी रपट 'भोटिया महाल्स' में निर्यात में 30000 मन अनाज, 10 हजार रुपये से अधिक दाम का कपड़ा, दस हजार रुपये से अधिक मूल्य के बर्तन तथा धातु सामग्री, 1000 मन गुड़, 1000 मन मिश्री, 10 मन मसाले, 10 मन रंग सामग्री (लाख तथा नील), लकड़ी के बर्तन, मूंगा, मोती आदि थे। आयात सामग्री में 15000 मन नमक, 1500 मन सोहागा, 600 मन ऊन, 100 फेटांग (सोने के टुकड़े) सोना आदि थे। अन्य सामानों में पंखी, रेशम, चंवर पूछ, दवायें, मेवे, चमड़ा आदि थे।[67] ट्रेल ने यह भी लिखा था कि 1816 से 1821 के बीच कुमाऊं का हिमालयपारीय व्यापार बढ़ा। जब आयात ज्यादा हुआ तो पहली बार व्यापार में नकद रुपये का इस्तेमाल हुआ।[68]

1840–41 में जोहार (किंग्रीबिंग्री ला), दारमा (दारमा पास) तथा ब्यांस (लीपू ला) से कुल रुपया 79375 का निर्यात तथा रु. 155700 का आयात हुआ था। निर्यात की मुख्य वस्तुएं थीं मिश्री, गुड़, कपड़ा, विविध अनाज, बादाम, नील, कपूर, छुआरा, मोती, मूंगा, तम्बाकू, बर्तन आदि तथा बटन, चाकू, मिर्च सहित अन्य अनेक सामान। निर्यात में गुड़ की कुल 12000 भेलियां, 21000 मन अनाज, 350 मन तम्बाकू, 70 मन छुआरे और तमाम तरह के कपड़ों के 15000 थान शामिल थे।[69] आयात की मुख्य सामग्री में 17000 मन सुहागा (बोराक्स), 5000 मन नमक, 380 तोला कस्तूरी, 22 मन पशम (ऊन), ऊनी कपड़े के 1300 थान, स्वर्ण चूर्ण 1500 पेतांग, भेड़ और बकरी 1000, घोड़े और याक 50, तीन आना वाले लद्दाखी तमासी सिक्के 7000 और कलदार भारतीय चांदी के रुपये के 15000 सिक्के। अन्य सामान थे केशर, शॉल, चीनी, रेशम, चाय आदि।[70]

20वीं सदी के पूर्वार्ध में हिमालयपारीय व्यापार स्थिरता और वृद्धि के दौर में आ सका। रतन सिंह रायपा ने लिपूलेख नाके से होने वाले व्यापार के आयात–निर्यात को साल 1922 में निम्न प्रकार प्रस्तुत किया है[71]–

निर्यात		आयात	
माल	मात्रा	माल	मात्रा
ब्रिटिश कपड़ा	44 मन	सुहागा	12167 मन
भारतीय कपड़ा	254 मन	नमक	1817 मन
अनाज/दालें	115 मन	ऊन	5414 मन
गेहूँ	1859 मन	ऊनी कपड़े	448 मन
अन्य अनाज	2760 मन	घोड़े	37
चावल	6217 मन	झप्पू	23
मौसमी अनाज	644 मन		
शक्कर	34 मन		
गुड़	3977 मन		
चाय	81 मन		
तम्बाकू	256 मन		
चाँदी के सिक्के	58163		
1 मन = 37 किलो			

शेरसिंह पांगती ने मिलम (किंग्रीबिंग्री नाके) से होने वाले हिमालयपारीय व्यापार की वस्तुओं का विवरण दिया है। उनके अनुसार 1877 में तिब्बत से 28631 मन नमक आया जो 1889 में 51337 मन, 1894 में 37827 मन, 1913 में 41022 मन और 1925 में 21747 मन हो गया था।[72] उन्नीसवीं सदी के अन्त में उत्तराखण्ड में साम्भर झील का नमक आना शुरू हुआ लेकिन लोगों को तिब्बत का नमक ही पसन्द था। इसका एक कारण इस नमक का औषधि गुण था। अतः उसकी मांग बनी रहती थी। तिब्बत से मिलम होकर आने वाला सोहागा 1877 में 29337 मन, 1889 में 53611 मन, 1910 में 35717 मन तथा 1925 में 31754 मन था।[73] तिब्बती ऊन का आयात 1878 में 6225 मन, 1897 में 10459 मन, 1908 में 14014 मन और 1925 में 14414 मन था।[74] इसी नाके से 1878 में 28164 मन, 1889 में 105444 मन, 1907 में 196183 मन और 1925 में 36926 मन अनाज तिब्बत गया।[75] स्पष्ट ही निर्यात में अनाज सबसे महत्व का और मात्रा में सर्वाधिक था। अन्य वस्तुओं में शक्कर, गुड़, मेवे, कपड़ा, धातु सामग्री (बर्तन, घंटियाँ आदि), बन्दूकें, दियासलाई, मूंगा और तम्बाकू आदि थे।

प्रथम तथा द्वितीय विश्वयुद्धों के दौर में भी भारत तिब्बत व्यापार

■ 4444 सीड़ियां उतरते यात्री

अपनी मंथर गति से चलता रहा। लेकिन 1949–50 में तिब्बत में चीनी शासकों द्वारा प्रत्यक्ष कब्जा कर लिये जाने के बाद व्यापार घटता गया और भारत–चीन युद्ध (1962) के बाद यह पूरी तरह रुक गया। इस तरह सदियों में विकसित एक आर्थिक–सांस्कृतिक कार्यकलाप एकाएक ठहर गया। अगले दो दशकों तक कैलास मानसरोवर की तीर्थयात्रा और चार दशकों तक व्यापार पूरी तरह रुक गया। सीमान्त के समुदायों द्वारा हजारों साल में विकसित एक बहुआयामी कार्यकलाप समाप्त हो गया। इसके बहुत दूरगामी परिणाम हुये। यह सिर्फ अर्थव्यवस्था का ध्वस्तीकरण ही नहीं था, इससे सांस्कृतिक गतिशीलता भी ठहर गईं। इस अवरोध का आंशिक उठान 1981 में कैलास मानसरोवर की तीर्थयात्रा के पुनः खुलने से और कुछ 1991 में व्यापार के आंशिक–औपचारिक रूप से शुरू होने से हुआ। हालांकि तीर्थयात्रा और व्यापार का पुनः प्रस्तुत रूप पारम्परिक व्यापार और तीर्थयात्रा से भिन्न था। इसमें समुदायों की स्वायत्त और स्वतंत्र गतिशीलता प्रतिबंधित थी। एक मशीनी गतिशीलता आर्थिक लाभ तो कुछ दे सकती है पर इससे सांस्कृतिक–सामाजिक संतोष प्राप्त करना मुश्किल होता है।

उत्तराखण्ड के मुख्य पाँच दर्रों से पारम्परिक हिमालयपारीय व्यापार संचालित होता रहा था। सीमान्त के पास की सबसे नजदीकी मंडी को उसके पास की भारतीय घाटी/गाँव के लोगों को आवंटित किया जाता था। ताकलाकोट मंडी ब्यांस और चौदांसवासियों को, चक्र मंडी दारमियों को, ग्यानिमा जोहारियों और दारमियों को, शिवचिलम मंडी नीतीवासियों को तथा छपरांग माणावासियों को आवंटित की गई थी। जब व्यापार 1991 में पुनः शुरू हुआ तो भारत और चीन के बीच एक अनुबन्ध पत्र पर 13 दिसम्बर 1991 को हस्ताक्षर हुए। इसे 15 जुलाई 1992 को पुनः दोहराया गया। इससे सीमान्ती समुदायों में कुछ उत्साह और उम्मीद जगी। एक भारतीय प्रतिनिधिमण्डल पर्वतीय विकास सचिव आर.एस. टोलिया के नेतृत्व में अगस्त 1993 में ताकलाकोट के व्यापार मेले में भी गया था।[76]

1992 में कुल निर्यात (ताकलाकोट नाके से) 12.09 लाख और आयात रु. 0.86 लाख का था। मुख्य आयात सामग्रियों में ऊन (3626 किलो), पशम (1404 किलो), बकरी और भेड़ (3634), चँवर पूँछ (460), सुहागा (6225 किलो) था। निर्यात वाले सामान में कपड़ा, काफी, वनस्पति तेल, तम्बाकू, गुड़, मिश्री, फाफर तथा आटा मुख्य थे।[77] 1993 में गये भारतीय व्यापार प्रतिनिधिमण्डल ने अपने अनुभव के अनुसार व्यापार को और अधिक विकसित करने के लिए अनेक सुझाव दिये थे, जो अभी पूरी तरह कार्यान्वित नहीं हुये हैं।

इस व्यापार प्रतिनिधिमण्डल के वापस आने के पच्चीस साल बाद तिब्बत के राजनैतिक और आर्थिक इतिहास तथा व्यापार के स्वरूप में बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ है। आज ताकलाकोट में छोलदारी (टैन्ट) वाली भारतीय मंडी के स्थान पर भारतीय और नेपाली व्यापारियों को पक्के और स्थाई बाजार दिये गये हैं। भारत और नेपाल (छांग्रू, टिंकर तथा हुम्ला) के व्यापारियों की संख्या बढ़ी है पर व्यापार का अभी विस्तार होना है। आज के भारतीय तथा नेपाली व्यापारियों द्वारा ताकलाकोट में किये जा रहे व्यापार के मिजाज को भी समझना और विश्लेषित करना होगा। यह अभी न तो पूरी तरह पुराने रूप में आ सका है और न ही पूरी तरह अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का रूप ले

■ मानसरोवर में सूर्यास्त

सका है। यद्यपि इसका रूप पुराने वस्तु विनिमय व्यापार का बना रह गया है और प्रचलित अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का रूप इसे अभी लेना है। ताकलाकोट में चीन और तिब्बत की क्षेत्रीय सरकार द्वारा भारतीय व्यापारियों को दी गई सुविधा को एक नया और महत्वपूर्ण कदम कहा जा सकता है। यद्यपि आज तिब्बत के व्यापारी गुंजी (भारतीय मंडी) आने में बहुत दिलचस्पी नहीं लेते हैं। सड़क सुविधा के कारण वे नेपाली मंडी हिल्सा तक जरूर हो आते हैं। हिल्सा से ही नेपाली और नेपाल होकर तिब्बत जाने वाले भारतीय यात्री तिब्बत में प्रवेश करते हैं। इस क्षेत्र (हुम्ला) में बची हुई तिब्बती मूल संस्कृति (गोम्पा आदि) के प्रति तिब्बतियों में गहरी रुचि है। इस ओर से नेपाल के भीतरी हिस्से में मोटर मार्ग भी पहुँच रहा है। छोटे जहाज तो क्रमशः काठमाण्डू और नेपालगंज से सिमीकोट को और हेलीकाप्टर हिल्सा तथा सिमीकोट (हुम्ला) के बीच अनेक सालों से उड़ ही रहे हैं। यह 'बौद्ध आकर्षण' उत्तराखण्ड के सीमान्त में नहीं है।

एक बार फिर पुराने सामान भारत और नेपाल से तिब्बत जाने लगे हैं। पुरू (लकड़ी की कटोरियाँ) आज भारत और नेपाल से तिब्बत में जाने वाली सबसे बड़ी और महंगी वस्तु है। हर तिब्बती अपना स्वतंत्र 'पुरू' चाहता है। लकड़ी की इस कटोरी के निर्माण में कश्मीर, हिमाचल, उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश और नेपाल के शिल्पी संलग्न हैं।[78] आज आर्थिक सम्बन्धों के इस नये सिलसिले को देखकर इतिहास में अनेक बार अप्रत्याशित होने वाली घटनाओं का स्मरण हो आता है। आज जब पुराने भारतीय तथा नेपाली व्यापारी पीछे देखते हैं तो वे बार–बार तिब्बत में हुये परिवर्तनों की चर्चा करते हैं। उन्होंने ऐसा तिब्बत नहीं देखा था। आधी सदी पहले तिब्बती लोग भारत तथा नेपाल से आने वाली सामग्री तथा अनाज का बेसब्री से इन्तजार करते थे। दरअसल ये उनके लिये मुख्य सामान थे। अब चीनी सामान, मैदा, नूडल आदि न सिर्फ तिब्बत में बल्कि नेपाल में भी आ रहा है। ल्हासा बियर नेपाली तथा भारतीय सीमान्ती बसासतों में इफरात से देखने को मिल रही है। अन्य सामान तो दोनों ओर नजर आता है। हिल्सा और सिमिकोट के बीच चीन से आये टिन, रंग, मशीनें, गाड़ियाँ, ट्रक आदि भी देखने को मिले। इस तरह का सामान छांग्रू और टिंकर में भी दिखा।

लेकिन भारत से जाने वाला गुड़, मिश्री तथा अन्य मिष्ठान्न आज भी तिब्बत में बहुत पसन्द किये जाते हैं। धातु सामग्री, लाठियाँ, कपड़े (फुटकर और रेडीमेड दोनों) की बहुत मांग है। ताकलाकोट में नेपालियों के रेस्टोरेन्ट बहुत अच्छा व्यवसाय कर रहे हैं। अनेक नेपाली व्यापारी अभी पक्के मकानों का इन्तजार कर रहे हैं। अभी उनको किराये के घरों से व्यवसाय करना पड़ रहा है।[79] पर सभी भारतीय व्यापारियों को पक्की दुकानें मिल गई हैं। यह भी याद रखना होगा कि उत्तराखण्ड के अन्य नाकों के बन्द हो जाने से अन्यत्र के समुदाय न तीर्थयात्रा और न व्यापार के सहयोगी के रूप में इस प्रक्रिया में शामिल हो पाते हैं।■

■ दारचिन में भूटान के प्रतिनिधि का ध्वस्त निवास

इन नदियों ने पश्चिमी तिब्बत को उत्तरी भारत के मैदानों से होकर बंगाल की खाड़ी और अरब सागर से जोड़ा। इन्हीं मैदानों में हड़प्पा सभ्यता और बाद में वैदिक संस्कृति का उदय हुआ था।

■ तीर्थयात्रा और तिब्बत व्यापार के आधार

8 तीर्थयात्रा का नया युग

व्यापार और तीर्थयात्रा का नया दौर सीमित–संकुचित ही था। पर धीरे धीरे बढ़ने लगा। भविष्य में यह निश्चय ही बढ़ेगा। कैलास क्षेत्र तथा तिब्बत के बड़े हिस्से के तीर्थयात्रा तथा पर्यटन और भारत तिब्बत व्यापार के औपचारिक रूप से खुल जाने के साथ पूरी दुनियां से कैलास मानसरोवर की तीर्थयात्रा के लिये अधिक उत्साह और उत्सुकता दिखाई दे रही है। तीर्थयात्रा में जाने वालों की संख्या भी बढ़ रही है। यह सिर्फ भारत या नेपाल से ही नहीं विश्वभर से है। फिलहाल भारत से दो मार्ग कैलास यात्रा में जाने हेतु खुले हैं। लीपूलेख का मार्ग 1981 में खुल गया था। 2014 से नाथूला का मोटर मार्ग भी खुल गया। इस मार्ग से दारचिन याकि यमद्वार तक वाहन में तिब्बत के बड़े हिस्से से होकर जाना होता है। इन दोनों मार्गों से बहुत अधिक तीर्थयात्री सीमित समय में तिब्बत नहीं जा पाते हैं, इसलिए और अधिक लोग नेपाल से वहाँ जाने की कोशिश करते हैं। नेपाल से दो मार्ग प्रचलित हैं। एक पुराना प्रचलित कोदारी मार्ग, जिससे होकर कैलास और ल्हासा दोनों स्थानों को जाया जा सकता है। तिब्बत में जाकर यह मार्ग विभाजित होता है। दूसरा जहाज–हेलीकाप्टर और पैदल का मार्ग काठमाण्डू–नेपालगंज–सिमिकोट (हुमला) तथा हिल्सा होकर है। एक तीसरे मार्ग के नेपाल के किरोंग होकर खुलने की सम्भावना है।

सुन्दर स्थानों में वह तत्व होते हैं जो उन्हें 'पवित्र' बना सकते हैं। उनमें वह शक्ति होती है जो मानव मन को गहराई से प्रभावित करती है। वह मनुष्यों द्वारा विकसित धर्मों को भी प्रभावित करते हैं।

चीन–तिब्बत का आन्तरिक मार्ग जो बेजिंग और ल्हासा होकर आता है वही दरअसल अन्तर्राष्ट्रीय आगन्तुकों का मार्ग है। ल्हासा के बाद आली में हवाई अड्डा बन जाने और बेजिंग से ल्हासा और अब सिगात्से तक रेल मार्ग के आ जाने से तिब्बत की यात्रा और अधिक आकर्षक तथा सुविधाजनक हो गई है। तिब्बत में और विशेष रूप से कैलास और चोमोलंगमा के आधार शिविरों तक आने वाले तीर्थयात्रियों और पर्यटकों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है। वर्तमान में तिब्बत में अमेरिका, यूरोप तथा अन्य यूरोपीय तथा एशियाई देशों से आने वाले पर्यटकों की संख्या अधिक बढ़ रही है।[80]

उत्तरी भारत का पारिस्थितिक स्रोत होने के साथ कैलास मानसरोवर क्षेत्र एक असाधारण सांस्कृतिक और धार्मिक आकर्षण है। इस तरह का अनेक संस्कृतियों और धर्मों के विश्वासियों का गन्तव्य दुनियां में कोई और नहीं है और न कोई ऐसी ठौर ही दुनियां में हैं जहां इतनी आस्था–विश्वासों के लोग साथ साथ चलते हैं और

■ तिब्बत में सांगपो (ब्रह्मपुत्र)

आपसी बातचीत भी करते हैं। अनेक बार शब्दों में, अनेक बार इशारों में और कुछेक बार अनुवादकों की मदद से। यहां न अयोध्या का दृश्य है और न जेरूसेलम का। खगोलीकरण के इन मारक दशकों में जब कट्टरता और संकुचित राष्ट्रवाद का दबदबा दुनियां में है, हम इस भूमि यानी यहां की प्रकृति और संस्कृति से बहुत कुछ सीख सकते हैं। कैलास जोड़ता है, आजाद करता है, बराबर करता है, जनतांत्रिक बनाता है, विविधता का पक्षधर है, आध्यात्मिक अनुभव देता है और आर्थिक अवसर भी। साथ ही यह प्राकृतिक सौन्दर्य, उदात्तता और वन्यता की प्रभाव शक्ति को भी बताता है।

इस दुर्लभ प्रक्रिया को हम और आगे कैसे ले जा सकते हैं ? यह आज विचारणीय है। इस त्रिसंधि (पश्चिमी तिब्बत, चीन; कुमाऊं, भारत तथा हुमला–बेतड़ी, नेपाल) क्षेत्र में निवास करने वाले समुदाय एक टिकाऊ अर्थव्यवस्था चाहते हैं पर पारिस्थितिकी के विनाश की कीमत पर नहीं। यह समझा जाना चाहिए कि कैलास मानसरोवर क्षेत्र को ल्हासा, काठमाण्डू, बद्रीनाथ, अयोध्या या जेरूसलम की तरह 'विकसित' करने की जरूरत नहीं है। यदि इस विराट रंगभूमि से हम प्रकृति को घटायेंगे, वन्यता को सीमित करेंगे तो सांस्कृतिक क्षय भी लगातार होगा। तीर्थयात्रा और व्यापार में शामिल हर हिस्सेदार को इस क्षेत्र में किसी भी तरह की 'घुसपैठ' करने से अपने को रोकना होगा। जो भी लोग कैलास मानस की यात्रा में जाते हैं उन्हें इस अत्याकर्षक क्षेत्र के सौन्दर्य को 'महसूस' करना चाहिए और वापस आकर अपने अनुभव औरों में बांटने चाहिए। इससे हम अधिक मनुष्य बनेंगे। न प्रकृति में अनावश्यक घुसपैठ होगी, न संस्कृति में।

इस क्षेत्र में तीर्थाटन, पर्यटन और व्यापार को अधिक सम्मानजनक, मानवीय और विकेन्द्रीकृत बनाने के लिए हमें उन विनाशकारी 'विकास' कार्यों से बचना चाहिए जो हमने हिमालय या तिब्बत के अनेक हिस्सों में कर दिये हैं और जिनके दुष्परिणाम भी हम भुगत रहे हैं। निर्माण कार्यों पर नियंत्रण, हर कार्यकलाप में अधिक स्थानीय हिस्सेदारी और परिवर्तन की गति को धीमा करने की कोशिश साथ–साथ होनी चाहिए। 'बड़ा पर्यटन' इस क्षेत्र को चारधाम यात्रा की तरह कुरूप कर देगा और इसकी पारिस्थितिक कीमत भी कम नहीं होगी। अगर हम यह हुनर सीख सकें तो इस क्षेत्र की वन्यता और संस्कृति से अनेक समुदायों का आर्थिक पोषण बिना प्रकृति में घुसपैठ किये होगा।

■ हुम्ला मार्ग (पश्चिमी नेपाल) में यात्रा सहयोगी

कैलास मानस क्षेत्र में अनेक मंडियों और व्यापार का विकास अनेक सदियों में विकसित मानवीय उद्यम और धार्मिक–आध्यात्मिक खोज का आकर्षक इतिहास है।

वर्तमान समय में दुनियाँ में हिन्दू, बौद्ध, जैन, बोनपा और सिख धर्मावलम्बियों की संख्या 153 करोड़ है, जो दुनियाँ की कुल जनसंख्या का 21 प्रतिशत है। पर बहुत कम हिन्दू, बौद्ध, जैन या बोनपा कैलास मानस क्षेत्र में जाने की कल्पना कर पाते हैं। दूसरी ओर पश्चिमी तिब्बती और उससे जुड़े भारतीय तथा नेपाली हिमालयी क्षेत्रों में अत्यन्त बिखरी जनसंख्या, कठिन भूगोल और विपरीत जलवायु है। वहाँ ज्यादातर घुमन्तू पशुचारक या आंशिक खेतीहर समुदाय रहते हैं। जिनमें कुछ कुटीर उद्योग, कुछ व्यापार और कुछ नौकरी पेशा होकर जीवन यापन करते हैं। औरों की नजर में वे गरीब और पिछड़े हैं। दूसरी ओर वे सदियों से कठिन पर आत्मनिर्भर और आत्मसम्मानी जीवन यापन करते रहे हैं। आज वे अपने आसपास हो रहे क्रियाकलापों में गहराई से शामिल नहीं हैं। राष्ट्रीय नीतियाँ उनको जिम्मेदारी से इस प्रक्रिया में शामिल करने में सफल नहीं हो सकी हैं। यह बात चीन, नेपाल और भारत तीनों देशों में लागू होती है। अतः आज इस क्षेत्र के समुदायों के लिए यह मौका है और चुनौती भी। वह इस प्रक्रिया में शामिल हों और इसे अर्थवत्ता और निरन्तरता दें।■

■ लखनपुर ढाबे के प्रसन्न स्वामी

9 और अन्त में

इससे आगे यह भी समझा जाना है कि इस पृथ्वी और विशेष रूप से हिन्दुकुश हिमालय के अनेक हिस्सों को स्थाई मानवीय घुसपैठ से कैसे बचाया जाय। कुछ ही दशक पहले तक हिमालय और तिब्बत के इन दूरस्थ, पवित्र और सुन्दर स्थानों तक विभिन्न समुदायों के सदस्य जाते थे पर यहाँ कोई स्थाई बसासतें नहीं थीं। जलवायु और कठिन ऊँचाई का भूगोल मुख्यतः इसके कारण थे। 6–6 माह तक बर्फ इन इलाकों और यहां के मार्गों को ढक देती थी। आज अच्छी चिकित्सा सेवा तथा सड़क संचार सुविधाओं के बीच हमें तीर्थाटन के तत्वों को बढ़ाने और पर्यटन के तत्वों को घटाने की जरूरत है। पर्यटन के साथ जिस तरह उपभोग, गन्दगी, शोर और श्रेष्ठता का भाव जुड़ गया है वह आगन्तुक को आतिथेय से बहुत ज्यादा शक्तिशाली बनाता है। यह सुविधाओं (होटल, सड़क, हवाई अड्डे, रेल मार्ग तथा वाहन आदि) से सीधा जुड़ा है। पर उपभोग के मिजाज और दुष्प्रभाव (पॉलीथीन, प्लास्टिक बोतलें, प्रदूषित करने वाले ईंधनों के अधिक इस्तेमाल) से इसे अलग करना भी सम्भव नहीं है। यह समझा और प्रयोग किया जाना है कि क्या तीर्थाटन के अत्यन्त मानवीय और व्यापक सूत्र 'आधुनिक तीव्र पर्यटन' एजेण्डे में शामिल किये जा सकते हैं या नहीं।

कैलास मानसरोवर क्षेत्र को ल्हासा, काठमाण्डू, बद्रीनाथ, अयोध्या या जेरूसलम की तरह 'विकसित' करने की जरूरत नहीं है।

हिमालय और हिमालयपार के समुदायों के शुभचिन्तक उस रणनीति और विधि को विकसित करने में योगदान दे सकते हैं जो प्रकृति और संस्कृति के विनष्टीकरण और दुरुपयोग को रोके और उचित नीतियों का नियमितिकरण करे। कैलास मानस सीमान्त पवित्र क्षेत्र (तिब्बत–चीन, नेपाल और भारत में) इस संदर्भ में एक नये प्रयोग का मौका देता है, जिसे परम्परा और आधुनिकता का संयुक्त मोर्चा जैसा बनाया जा सकता है। नियंत्रित तीर्थाटन और पर्यटन को कुटीर उद्योगों, हस्तकलाओं, संग्रहालयों की स्थापना और विकास तथा पारम्परिक ज्ञान को कायम रखने हेतु प्रशिक्षण संस्थाओं के साथ जोड़े जाने की गहरी कोशिश हो। इसी के साथ हिमालय और तिब्बत की जैवविविधता और सांस्कृतिक सम्पन्नता को बनाये रखने की बात जुड़ी है।

अन्त में मैं यह कहना चाहूंगा कि कैलास मानसरोवर पवित्र क्षेत्र के तीनों हिस्सों की पारिस्थितिक, सामाजिक–सांस्कृतिक और आर्थिक अन्तर्निर्भरता दरअसल एशिया के तीन देशों (तिब्बत–चीन, भारत और नेपाल) के तीन साथ लगे भौगोलिक कोनों में निवास कर रहे समुदायों के हित में भी है। यहाँ पर अन्तर्राष्ट्रीय सीमाएँ एक–दूसरे से मिलती हैं लेकिन भूदृश्य और सामाजिक–सांस्कृतिक समानताएँ सीमाओं की उपस्थिति को अदृश्य कर देती हैं। यही कैलास मानसरोवर क्षेत्र और इससे जुड़ी परम्पराओं की शक्ति और क्षमता है।

**

(पहले आर.एस. टोलिया स्मारक व्याख्यान के रूप में यह व्याख्यान 11 दिसम्बर 2016 को पर्वत दिवस के मौके पर गोविन्द बल्लभ पन्त हिमालयी पर्यावरण और विकास संस्थान, कोसी कटारमल, अलमोड़ा में दिया गया था। यह व्याख्यान उत्तराखण्ड विज्ञान तथा तकनिकी परिषद (यूकोस्ट) तथा गोविन्द बल्लभ पन्त हिमालयी पर्यावरण और विकास संस्थान के संयुक्त तत्वावधान में प्रारम्भ किया गया है। इसके आयोजन तथा पहले व्याख्यान के लिये मुझको आमंत्रित करने के लिये यूकोस्ट के महानिदेशक राजेन्द्र डोभाल तथा पंत पर्यावरण संस्थान के निदेशकों पीताम्बर घ्यानी (पूर्व) और रनबीर रावल (वर्तमान) तथा इसे इस सुन्दर रूप में प्रकाशित करनें के लिये निदेशक रनबीर रावल तथा वरिष्ठ वैज्ञानिक राकेश सुन्दरियाल का आभार)■

■ डोलमा ला में लेखक (गोद में तिब्बती लड़की) तथा अशोक गुरुंग

परिशिष्ट

कैलास–1

vkt Hkh re mru gh vkfne gk
ftru jg gkx tUe d le;A
re çÑfr d ijkrRo gk
vkj HkxfHkd Åtk d dykdeA

re iFoh d chpkchp fLFkr
tknb LFkkiR; gk]
djkMk lky e cu ldh jpukA

vud fo'okl vkj vkLFkk,
eMjkrh g rEgkj prfnd
fQj Hkh re u v;k/;k gk
vkj u t:lye
yky lfudk u ugh ?kjk g rEg
lj{kk d fy,A

bru vdy gkdj Hkh
fdru f?kj gk
vkj bru f?kj gkdj Hkh
re fdru vdy gk dykl!

कैलास–2

dHkh re ygjkr gk
diM d irkdk dh rjg
/ke xUFk d iUuk dh rjg iyVr gk
viu pgj d cknyA

dHkh ekul dh rjg
uhy iM tkr gk xgu xgu
vkj dHkh pknuh e Hkhxr gk pipkiA

ljt dk rki drjkrk g
rEgkjh vk<h cQ fi?kyku e
vkj pkn rEgkj f'k[kj ij vkdj
Bgj tkuk pkgrk g
cãk.M d reke fu;e d f[kykQA

vkj db ckj re
?kfV;k dh rjg ctr gk yxkrkj
fdlh e= dh rjg
xUtk;eku gj vkjA

jkf= d xgu v/kj e
cpu frCcr d
tkxr igjh yxr gk re
viu vki e [kk; g,
fQj Hkh eLrnA

(पहली कैलास यात्रा में परिक्रमा के बाद 21 अगस्त 1990 की रात अष्टपाद से लौटकर लेखक द्वारा दारचिन में लिखी गयी लम्बी कविता के अंश। देखें–बादल को घिरते देखा है, बहुबचन, अप्रैल–जून, 2001)

1

2

3

4

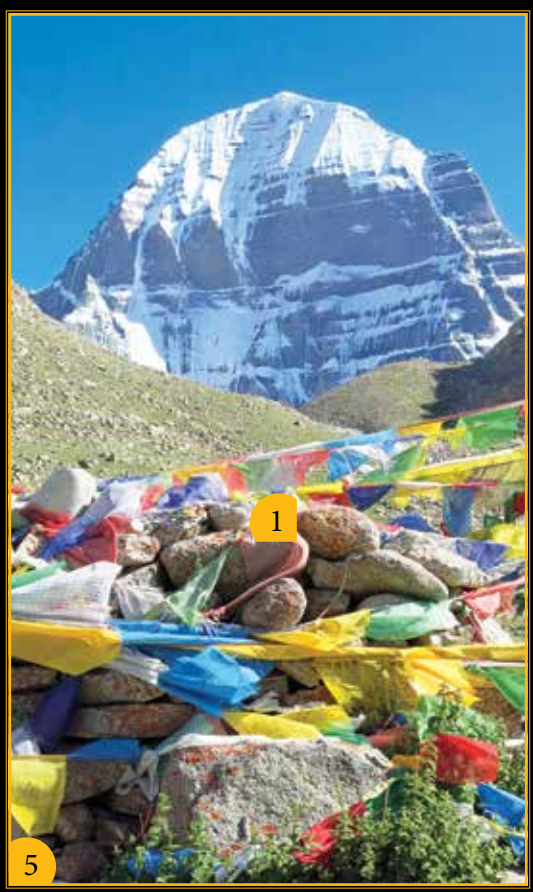
1
5

6

1. गुरला मान्धाता पर्वत
2. कोदारी में नेपाल और तिब्बत के बाजार
3. मानस के किनारे उत्तराखण्ड की बेटियां
4. गंगा छ्यू गोम्पा के पीछे कैलास
5. देरापुक में कैलास
6. तिब्बत से टिंकर शिखर
7. मानस के पक्षी
8. श्रीखण्ड कैलास, किन्नौर, हिमाचल
9. कैलास दक्षिण पूर्व से

7

8

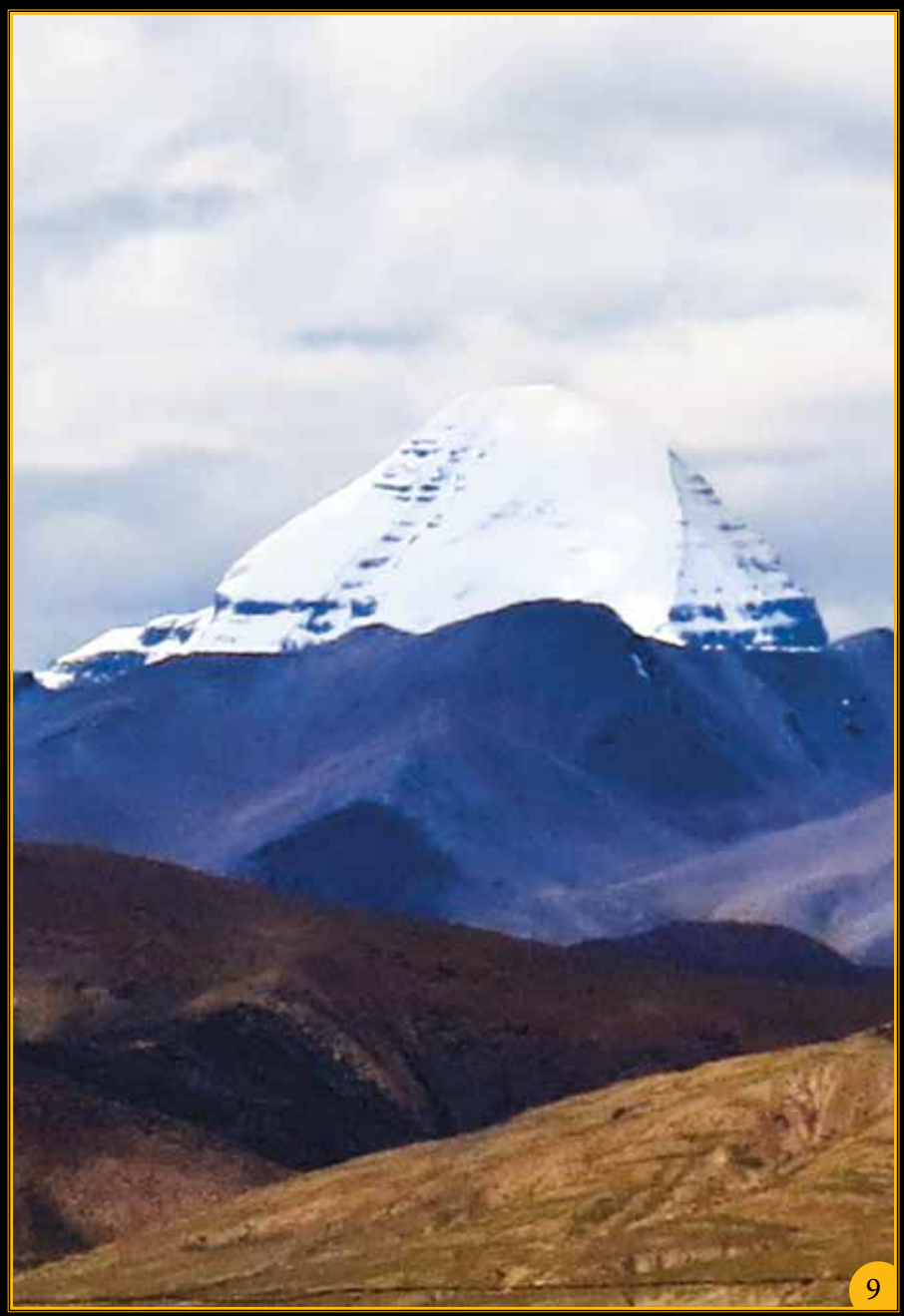
9

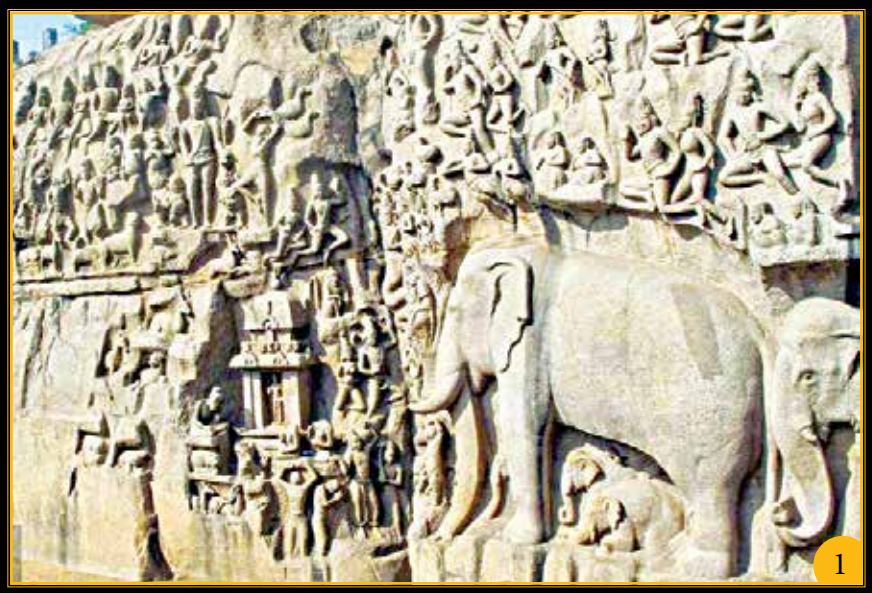
1

2

3

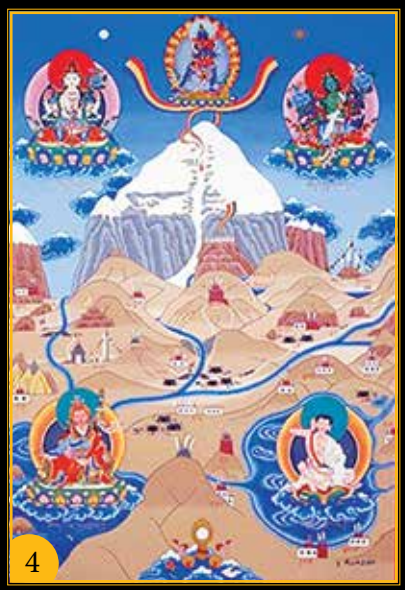
4

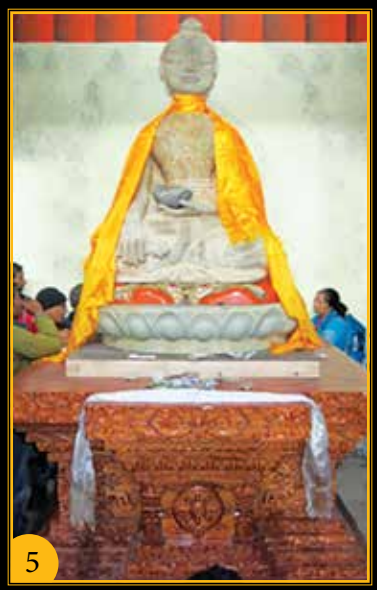
5

6

7

8

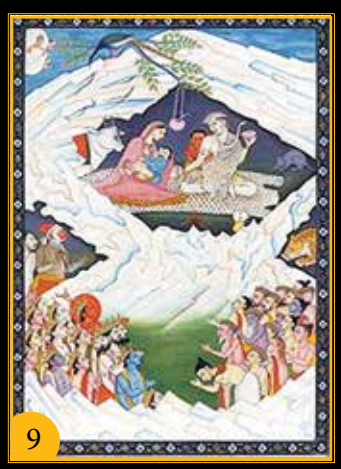
9

1. महाबलीपुरम में कैलास के सामने एक पांव में खड़ा अर्जुन
2. विरुपक्ष मंदिर, धारवाड़, कर्नाटक में कैलास को उठाता रावण
3. डेमचोक और दोरजी फागंमो की प्रतिमा
4. एक तिब्बती चित्र में कैलास
5. बोन धर्म के संस्थापक टोनपा शैनरैब मिवाचे
6. टाकलाकोट में धारचुला की व्यापारी बेटियां
7. परिक्रमा पथ में मणि पत्थर
8. जैन धर्म के पहले तीर्थंकर आदिनाथ
9. पहाड़ी चित्रकला में शिव परिवार

संदर्भ तथा टिप्पणियां

1. Shekhar Pathak, 2016, Himalaya : Highest, Holy and Hijacked, in Globalization and Marginalization in Mountain Regions: 87-109

2. कैलास (ऊंचाईः 6714 मीटर/22028 फीट; तिब्बती नामः कांगरिन्पोचे); गुरुला मान्धाता (7694 मी./25355 फीट; मेमोनानी या नइमोनान्यी); मानसरोवर (4530 मी./14950 फीट; त्सो मावंग या त्सो रिम्पोचे) तथा राकसताल (4515 मी./14900 फीट; लांगत्सो)

3. सभी पुराने ग्रंथों–वेद, महाभारत, रामायण तथा शिवपुराण आदि–में कैलास (KAILAS) शब्द आया है, जिसे कालिदास से तुलसीदास तक और फिर आधुनिक यात्रियों ने इस्तेमाल किया है। जिनमें हेनरी स्ट्रेची, रिचर्ड स्ट्रेची, स्वेन हेडिन से लेकर प्रणवानन्द और बिमल डे तक तमाम कैलासयात्री और अध्येता हैं। इधर कुछ लेख. कों ने कैलाश (KAILASH) लिखना शुरू किया जो गलत है। कैलाश एक शब्द के रूप में किसी हिन्दी या अंग्रेजी शब्दकोश में नहीं आया है। संस्कृत में कैलास को 'केलयोर्जलभूम्यो आसनम् स्थितिः यस्य कैलासः स्फटिकम् तर्स्यायम कैलासः' यानी 'स्फटिक आकार का, पानी और धरती में स्थित (पर्वत)' कहा गया है। एक अन्य पंक्ति में कहा गया है, 'केलिनाम् समूहः केलम् तेन आस्यत इति कैलास' यानी एक स्थान (पर्वत) जहां शिव और पार्वती खेलते हैं। मेधदूत की श्रेष्ठ काव्य पंक्तियों में कैलास को 'शिव का मुक्त अट्टहास' कहा गया है।

4. प्रणवानन्द ने 1939 में लिखा थारू 'Thus the Kailas-Manas region engages the attention of a person of any calling or profession, whether he is a poet or a painter, a physicist or a chemist, a botanist or a zoologist, a geologist or a surveyor, a geographer or a historian, a hunter or a sportsman, a skater or a skier, a physiologist or a psychologist, an ethnologist or a sociologist, a pilgrim or a tourist, a hermit or a householder, a clergy man or a tradesman, a treasure-hunter or a spirit-hunter, a theist or an atheist, a scholar or a politician, young or old, man or woman' (Exploration in Tibet: 73-74)

5. Sven Hedin, 1990 (1909), Trans-Himalaya: Discoveries and Adventures in Tibet, Volume 2: 89-214; Pranavanand, Exploration in Tibet

6. Gansser, 1939, On Pilgrimage to Kailas, in The Throne of the Gods: 90-111; Navin Juyal and others, 2011, Geomorphic Evidence of Glaciations Around Mount Kailash (Inner Kora): Implication to Past Climate, Current Science, Vol. 100, No. 4, 25 February: 535-541

7. कैलास पर्वत की बोनपा विधि से परिक्रमा करते हुये 30 जुलाई 2016 को जब मैंने अपनी तीसरी यात्रा के समय एक चीनी दम्पति से उनके अनुभवों के बारे में पूछा (वे अंग्रेजी बोल सकते थे) तो दोनों ने कहा कि वे धार्मिक नहीं हैं। मैंने उनसे कहा कि यहां धर्म नहीं प्रकृति है। हम अपनी धार्मिक पहचान लेकर यहां आते हैं पर यहां की प्रकृति उसे धो देती है। वे मुस्कुराये और कहा कि हम भी प्रकृति के साथ हैं और उससे मोहित हैं। जब मैंने पूछा कि क्या वे प्रकृति को दुनिया ने अनेक समुदायों की तरह देवता का स्वरूप मानते है, तो वे सिर्फ मुस्कुराते रहे और कोई उत्तर देने से बचते रहे।

8. Dilip Simeon, 2011, An Agnostic in Kailash, Himal, October and Himalmag.com

9. Alex McKay: Kailas Histories: 73

10. Alex McKay: Kailas Histories: 76-77

11. Govinda Anagrik Lama, The Way of the White Clouds; John Myrdhin Reynolds, 2014 (2005), The Oral Tradition from Zhang-Zhung

12. Govinda Lama, The Way of the White Clouds

13. Pranavanand, Kailas Manasarovar

14. Alex McKay: Kailas Histories: 102

15. 'Kailas, Lapchi and Tsari are the three most important pilgrimages in Tibet. Each place is associated with a holy mountain. Kailas (Kang Rinpoche), Lapchi Gang, Takpa Shelri, all considered places of Demchok, the wrathful emanation of the Budhha Sakyamuni. The cult of Demchok was initiated in the early 12th C. by Phagmo Drupa and propagated by the Drigungpa, Drupa, and later, the Gelugpa. The three sites are identified as the 'body, speech and mind' of the deity.' Victor Chan, Tibet Handbook: 208

16. Giuseppe Tucci, The Religions of Tibet: 285-291

17. Deb Mukharji: 49

18. Pranavanand, Kailas Manasarovar: 55-56

19. जैन धर्म के संस्थापक महावीर 24 वें तीर्थंकर माने जाते हैं।

20. Harbans Singh, Guru Nanak and Origins of the Sikh Faith: 115-117, 159-162, map 228-229; Fauja Singh, Kirpal Singh, Atlas: Travels of Guru Nanak: 3, 5-7, 11-18 and maps

21. कैलास के भीतरी प्रदक्षिणा पथ, नन्दी पर्वत तेरह चोर्तन, कैलास के दक्षिणी चेहरे तथा कपाला दुर्ची (सफेद ताल) के फोटो हेतु देखें: Wolfgang Wollmer, The Inner and Outer Paths of Mt. Kailash: 125-170

22. मानसखण्ड, अध्याय 174 : 630; मानसखण्ड में लंकाह्रद में स्नान करने का महात्म्य भी बताया गया है, लेकिन यह स्नान मानसरोवर में स्नान करने के बाद ही होना चाहिये (मानसखण्ड, अध्याय 173 : 629)

23. मानसखण्ड, अध्याय 174: 630; मानसखण्ड में कुमाऊं, पश्चिमी नेपाल और कैलास मानस क्षेत्र तथा तीर्थों के वर्णन के साथ कैलास तीर्थयात्रा के तब प्रचलित मार्ग का विस्तृत वर्णन है।

24. Arnold Heim, Augusto Gansser, 1994 (1939), The Throne of the Gods: 98-99 "Strangely enough, it consists of horizonally stratified conglomerate masses with erratic admixture. In the course of geological aeons, these strata have been elevated many thousands of feet without any change in the horizontal layout. " (Gansser 1939) "The Kailas Flysch represents the last remnant of the Himalayas, thrust steeply northwards over the autochthonous Kailas conglomerate which transgresses over the Kailas granite." (Gansser 1964)

25. K.S. Valdiya, 2012, Geography, Peoples and Geodynamics of India in Purans and Epics: 16

26. dkfynkl ¼e/knr½ dk dykl lEc/kh in fuEu idkj g%
‘xRokpk/on'ke[kHk tkPNokfl r iLFkl U/k%
dykl L; f=n'kofurkni.kL;kfrfFk% L;k%A
JxkPNk;% denfo'kn;kforR; fLFkr% [k
jk'khHkr% ifrfnufeo «;EcdL;kêgkl %AA*
(पूर्वमेघ/58 : 34–35, कालिदास ग्रंथावली, रेवाप्रसाद द्विवेदी, वाराणसी)
bldk vxth vuokn bl rjg fd;k x;k Fkk%
'Having soared upwards, be the guest of Mount Kailas (whose high table-land joints were united (were broken) by the arm of the ten faced one), the looking glass of the Goddesses, whose horn elevation, like the water lily, stands expanding into heaven, like an accumulated burst of laughter of the three eyed one, (reacting) to every region.' (Kalidasa, The Meghduta or Cloud Messenger: 36, Translation by Col. H.A. Ouvry, 1868, Williams and Norgate, London)
अंग्रेजी भाषा के महान कवि विलियम बटलर यीट्स की 'मेरु' कविता हेतु देखें: William Butler Yeats, 1996, Selected Poems and Plays, Scribner Paper Book Poetry, New York: 177
कैलास मानस के समग्र परिवेश को प्रणवानन्द ने इस तरह धड़कता हुआ पाया-"There is no doubt, however, that the surroundings of the Holi Kailas and Mansarovar are highly charged with spiritual vibrations of a supreme order, which make one exhilarated and elevated.' Pranavanand : 55

27. McKay: 28-36

28. McKay: 36

29. McKay: 43

30. Valmiki, Ramayan, Yuddha Kand, Sarg III: poem 131-132

31. मदन चन्द्र भट्ट, मेरु पर्वत का इतिहास : 60–61

32. मदन चन्द्र भट्ट, मेरु पर्वत का इतिहास : 61–63

33. McKay: 44

34. भगवतशरण उपाध्याय, कालिदास का भारतः 23–26

35. McKay: 59

36. McKay: 50, 98-101

37. श्रीकैलास शिखर की फोटो हेतु देखें: Swami Sundaranand, Himalaya Through the Lens of a Sadhu: 133 तथा मेरु शिखर हेतु देखें :134

38. Axel Michaels, Siva in Trouble: 196

39. हुमला, नेपाल की करनाली घाटी से कैलास की ओर जाते हुये 24 जुलाई 2016 को इस पर्वत को देखा था।

40. John Snelling, The Sacred Mountain: 23-24

41. तरुण विजय, 1994, साक्षात शिव से सम्वादः 3, 5 तथा अन्तिम आवरण

42. विस्तार हेतु देखें : एशिया की पीठ पर, भाग एक

43. Nathalie E. Hunger, A History of Discovery and Exploration, Africa and Asia: Mapping Two Continents: 73-75; Maclagan, The Jesuits and the Great Mogul: 344

44. Kenneth Mason, Abode of Snow: 58

45. William Moorcroft, 1818, A Journey to Lake Manasarovar in Undes, A Province of Little Tibet, Asiatic Researches, Volume 12: 380-424; Garry Alder, 1985, Beyond Bokhara: The Life of William Moorcroft-Asian Explorer and Pioneer Veterinary Surgeon 1767-1825: 126-156; Daniel E. Jantzen, The Moorcroft Mystery

46. Henry Strachey, 1848, Narrative of a Journey to Cho Lagan (Rakas Tal), Cho Mapam (Manasarowar) and valley of Purang in Gnari, Hundes, in September and October 1846, Journal of the Asiatic Society of Bengal, Volume 17, Part II, July-September: 98-120, 127-182, 327-351

47. Richard Strachey, 1900, Narrative of a Journey to the Lakes Rakas-Tal and Manasarowar in Western Tibet, under taken in September 1848, Geographical Journal, Volume 15: 150-170, 243-264, 394-411

48. Charles Allen, A Mountain in Tibet: 125-138

49. Thomas Webber, 1902, Forests of Upper India

50. Hermann, Adolphe and Robert Schlagintweit, Results of a Scientific Mission to India and High Asia, Undertaken between the year MIDCCCLIV (1854) to MIDCCCLVIII (1858) by order of the Court of Directors of the Honourable East India Company, 1861, Volume I: 18-19; Adolphe and Robert Schlagintweit, Journey from Milam in Johar to Gartok, Journal of Asiatic Society of Bengal, Volume XXV, 1857: 125-133

51. C.A. Sherring, 1906, Western Tibet and British Borderland; G.M. Young, A Journey to Toling and Tsaprang in Tibet, Journal of the Punjab Historical Society, VII, 1919, Calcutta; Kenneth Mason, Abode of Snow: 58

52. Snelling, John, 1983, The Sacred Mounatin, London; Deb Mukharji, A Quest Beyond the Himalaya: 73-87

53. भवान सिंह रावत, 2009, प्रथम पद्म पुरष्कृत, पहाड़ 16–17: 512–514; Bimal Dey, The Last Time I Saw Tibet: 206-267

54. McKay: 50

55. नैनसिंह रावत की थोकज्यालुंग डायरी, एशिया की पीठ पर : 291–315; James F. Fisher, 1986, Trans Himalayan Traders: Economy, Society & Culture in North West Nepal, University of California Press, Los Angeles/ London; von Furer-Haimendorf, Christoph, 1975, Himalayan Traders, St. Martin Press, New York; G.W. Traill, 1832, Bhotia Mahals,

Asiatic Researches; Pilgrim, 1844, Wanderings in the Himala, Agra Press, Agra; एस.एस. पांगती, मध्य हिमालय की भोटिया जनजातिः 45–64; रतन सिंह रायपा, शौकाः 291–306

56. B.D. Sanwal, Nepal and East India Company

57. Sukhdev Singh Charak, 1978, Indian Conquest of Himalayan Territories, Ajay Prakashan, Jammu: 124-137; A.H. Francke, 1977 (1907), Sterling, New Delhi: 157-162

58. राहुल साकृत्यायन, कुमाऊः 86–89; रतन सिंह रायपा, शौकाः 48–49

59. इस संदर्भ में डा. रामसिंह द्वारा चंद बहियों पर दी सूचना के अनुसार

60. हरिकृष्ण रतूड़ी, गढ़वाल का इतिहास : 378; शिव प्रसाद डबराल, उत्तराखण्ड का इतिहास, खण्ड चारः 244–245 तथा 254–256

61. Pranavanand, Exploration in Tibet: 68

62. John Snelling, The Sacred Mountain: 139, 315, 373

63. F. Williamson, 1934, Note on the Darchin Monastery Dispute, Appendix 4 in John Snelling, The Sacred Mountain: 423-425; 1956 में तिब्बत की यात्रा में ल्हासा से कैलास पहुचने वाले बिमल डे ने भी लिखा है कि राजनैतिक रूप से कैलास तिब्बत का भाग है पर भूटान का निश्चय ही यहां प्रभाव है। मुख्य बाजार या मण्डी का स्वामित्व भूटान सरकार का है। पर राजनैतिक कारणों से वहां के व्यापारियों का इधर आना बन्द हो गया है। लामा लोग या तो कश्मीर (लद्दाख) को चले गये हैं या भूटान को। लोंगबोना गोम्पा इस तरह खाली हो गया है (Bimal Dey, The Last Time I Saw Tibet: 244)

64. देखेंः ललित पन्त तथा एस.एस. पांगती, पहाड़ 3ः 28–37

65. G.W. Traill: Statistical Sketch of Kumaon, AR, XVI: 194

66. Traill, Statistical Sketch of Kumaon: AR, Volume XVI: 168

67. Traill, 1832, Bhotia Mahals, AR, XVII: 37-44

68. Traill, 1832, Bhotia Mahals, AR, XVII: 44

69. Pilgrim: 172-173

70. Pilgrim: 174-175

71. रतन सिंह रायपाः 299

72. एस.एस. पांगती, मध्य हिमालय की भोटिया जनजातिः 54

73. एस.एस. पांगती : 55

74. एस.एस. पांगती : 57

75. एस.एस. पांगती : 61

76. See : R.S. Tolia, Anup Pande, M.S. Kutiyal, 1993, Report of U.P Trade Delegation on Indo-China Border Trade (Through Lipulekh Pass), Lucknow

77. R.S. Tolia and others, 1993, Report of U.P Trade Delegation on Indo-China Border Trade: 3-4

78. घारचुला, गर्ब्यांग और ताकलाकोट के भोटिया व्यापारियों से इन स्थानों पर 2013, 2015 तथा 2016 में भेंटवार्ता

79. नेपाली व्यापारियों से दारचुला, छांग्रू, टिंकर, हिल्सा, सिमीकोट तथा ताकलाकोट में 2015, 2016 तथा 2017 में भेंटवार्ता

80. एक भारतीय स्वामी तथा कैलास यात्री तपोवन महाराज ने 1930 में ही कैलास क्षेत्र के आगामी हवाई अड्डों की कल्पना की थी। (Swami Tapowanji Maharaj, 1989, Himgiri Vihar: 288)

संदर्भ

- Alder, Garry, 1985, Beyond Bokhara: The Life of William Moorcroft-Asian Explorer and Pioneer Veterinary Surgeon 1767-1825, Century Publishing, London
- Allen, Charles, 1992 (1982), A Mountain in Tibet, Calcutta
- भट्ट, उमा; पाठक, शेखर, 2006, एशिया की पीठ पर, भाग 2, पहाड़ पोथी, नैनीताल
- Charak, Sukhdev Singh, 1978, Indian Conquest of Himalayan Territories, Ajay Prakashan, Jammu
- Chan, Victor, 1994, Tibet Handbook- A Pilgrimage Guide, Moon Publication, Chiko, California
- Dabral, Shiv Prasad, Samvat 2028 (1971), Uttarakhand ka Itihas, Volume 4, Veer-gatha, Dogada
- Dey, Bimal, 2007, The Last Time I Saw Tibet, Penguin, New Delhi
- द्विवेदी, रेवाप्रसाद (सम्पादक), 1976, का. लिदास ग्रंथावली, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
- Fillipi, Filippo de (Ed.), 1937, An Account of Tibet: The Travels of Ippolito Desideri of Pistoia, S.J., 1712-21, London
- Fisher, James F., 1986, Trans Himalayan Traders: Economy, Society& Culture in North West Nepal, University of California Press, Los Angeles/ London
- Francke, A.H., 1977 (1907), A History of Ladakh, Sterling, New Delhi
- Gansser, Augusto, 1939, On Pilgrimage to Kailas, in The Throne of the Gods, Book Faith, Delhi
- Griffith, Ralph T. H. (Translatorinto English Verse), 1915 (1870-74), The Ramayan of Val-miki, Tubner and Co, London
- Haimendorf, von Furer, Christoph, 1975, Hi-malayan Traders, St. Martin Press, New York
- Hedin, Sven, 1990 (1911), Trans- Himalaya: Discoveries and Adventures in Tibet, Volume 1, Gian, Delhi
- ----------, 1990 (1909), Trans- Himalaya: Discoveries and Adventures in Tibet, Volume 2
- ----------, 1990 (1912), Trans- Himalaya, : Discoveries and Adventures in Tibet, Volume 3
- Heim, Arnold, Augusto Gansser, 1994 (1939), The Throne of the Gods, Book Faith, Delhi
- Hunger, Nathalie E., A History of Discovery and Exploration, Africa and Asia: Mapping Two Continents: Aldus Books, London
- Jantzen, Daniel E., 2012, The Moorcroft Mys-tery, Pahar Pothi, Nainital
- Johnson, Russell and Kerry Moran, 1989, Tibet's Sacred Mountain: The Extraordinary Pilgrimage to Mount Kailas, Park Street Press, Rochester
- Juyal, Navin and others, 2011, Geomorphic Evidence of Glaciations Around Mount Kailash (Inner Kora): Implication to Past Climate, Current Science, Vol. 100, No. 4, 25 February, Bangalore

- Lama, Anagarika Govinda, 1966, The Way of the White Clouds, London
- Maclagan, Edward, 1932, The Jesuits and the Great Mogul, London
- Mason, Kenneth, 1955, Abode of Snow: A History of Himalayan Exploration and Mountaineering, Rupart Hart-Davis, London
- Michaels, Axel, 2008, Siva in Trouble, OUP, New York
- Moorcroft, William, 1818, A Journey to Lake Manasarovar in Undes, A Province of Little Tibet, Asiatic Researches, Volume 12
- Mukharji, Deb, 2014, Kailash and Manasarovar: A Quest Beyond the Himalaya, Niyogi Books, Delhi
- Ouvry, Col. H.A. (Translator), 1868, Kalidasa, The Meghduta or Cloud Messenger, Williams and Norgate, London
- पन्त, ललित, 1989, सिमटती हुई स्मृद्धि, पहाड़ 3, नैनीताल
- पाठक, शेखर, 2001, बादल को घिरते देखा है, बहुबचन अप्रैल–जून, महात्मा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विवि, वर्धा
- पाठक, शेखर, 2009, नीले बर्फीले स्वप्नलोक में, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली
- पांगती, शेरसिंह., 1989, एक अनुभव की स्मृति, पहाड़ 3, नैनीताल
- पांगती, एस.एस., 1992, मध्य हिमालय की भो. टिया जनजाति, तक्षशिला, दिल्ली
- पाण्डेय, गोपाल दत्त (सम्पादक–परिष्कर्ता), 1989, मानसखण्ड:, श्रीनित्यानन्द स्मारक समिति, वाराणसी
- Pathak, Shekhar, 2016, Himalaya: Highest, Holy and Hijacked, in Raghubir Chand, Walter Leimgruber (Editors), Globalization and Marginalization in Mountain Regions, Springer, Switzerland
- Pilgrim, 1844, Wanderings in the Himala, Agra Press, Agra
- Pranavanand, Swami, 1939, Exploration in Tibet, Calcutta University, Calcutta
- ----------, 1950, Kailas- Manasarovar, Calcutta
- Reynolds, John Myrdhin, 2014 (2005), The Oral Tradition from Zhang-Zhung, Bajra Books, Kathmandu
- रायपा, रतन सिंह, 1974,शौका सीमीवर्ती जनजा. ति, रायपा ब्रादर्स, घारचुला
- रावत, भवान सिंह, 2009, लक्ष्मण सिंह जंगपांगी: प्रथम पद्म पुरष्कृत, पहाड़ 16–17, नैनीताल
- रतूड़ी, हरीकृष्ण, 1928, गढ़वाल का इतिहास, देहरादून
- Sanwal, B.D., 1962, Nepal and East India Company, Asia, New Delhi
- सांकृत्यायन, राहुल, 1958, कुमाऊं, ज्ञानमण्डल, वाराणसी
- Schlagintweit, Adolphe and Robert, 1857, Journey from Milam in Johar to Gartok, Journal of Asiatic Society of Bengal, Volume XXV, Calcutta
- Schlagintweit, Hermann, Adolphe and Robert, 1861, Results of a Scientific Mission to India and High Asia, Undertaken between the year MIDCCCLIV (1854) to MIDCCCLVIII (1858) by order of the Court of Directors of the Honourable East India Company, Volume I
- Sherring, C.A., 1906, Western Tibet and British Borderland, Allahabad

- Simeon, Dilip, 2011, An Agnostic in Kailash, Himal, October and Himalmag.com, Kathmandu
- Singh, Harbans, 1969, Guru Nanak and Origins of the Sikh Faith, Asia Publishing House, Bombay
- Singh, Fauja, Kirpal Singh, 2004 (1976), Atlas: Travels of Guru Nanak, Punjab University, Patiala
- Snelling, John, 1983, The Sacred Mounatin, London
- Strachey, Henry, 1848, Narrative of a Journey to Cho Lagan (Rakas Tal), Cho Mapam (Manasarowar) and valley of Purang in Gnari, Hundes, in September and October 1846, Journal of the Asiatic Society of Bengal, Volume 17, Part II, July-September
- Strachey, Richard, 1900, Narrative of a journey to the Lakes Rakas-Tal and Manasarowar in Western Tibet, under taken in September 1848, Geographical Journal, Volume 15
- Sundaranand, Swami, 2001, Himalaya: Through the Lens of a Sadhu, Tapovan Prakashan, Gangotri, Uttarkashi
- Tapowanji Maharaj, Swami, 1989, Himgiri Vihar, Bombay
- Traill, G.W., 1828, Statistical Sketch of Kumaon, Asiatic Researches, XVI, Calcutta
- Traill, G.W., 1832, Bhotia Mahals, Asiatic Researches, XVII, Calcutta
- Tucci, Giuseppe, 1980, The Religions of Tibet, London
- उपाध्याय, भगवतशरण, 2010 (1955), कालिदास का भारत, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
- Valdiya, K.S., 2012, Geography, Peoples and Geodynamics of India in Purans and Epics-A Geologist's Interpretations, Aryan, Delhi
- विजय, तरुण, 1994, साक्षात शिव से सम्वाद, ऋत्विक प्रकाशन, देहरादून
- Wollmer, Wolfgang, 2014, The Inner and Outer Paths of Mt. Kailash, Kathmandu
- Yeats, William Butler, 1996, Selected Poems and Plays, Scribner Paper Book Poetry, New York
- Young, G.M., A Journey to Toling and Tsaprang in Tibet, Journal of the Punjab Historical Society, VII, 1919, Calcutta
- भेंटवार्ताः रामसिंह, सुरेन्द्र सिंह पांगती; कैलाश पाण्डे, अनूप साह, श्रीश कपूर, उमा भट्ट, ललित पन्त, प्रकाश उपाघ्याय, चंदन डांगी, पुष्पा डांगी, छवांग लामा, अभिमन्यु पांडे, मुक्ता लामा, अशोक गुरंग, मार्क लैरीमोर, हिमानी उपाध्याय, रफी योआट, क्रिस क्रियूज, पासांग शेरपा, रिनजिन लामा, कुंगा येशे, स्वप्निल चौधरी तथा न्यिंगचा दुओजी आदि कैलास यात्रियों–सह शोधकर्ताओं तथा धारचुला, गर्ब्यांग, दारचुला, छांग्रू, टिंकर, ताकलाकोट, हिल्सा, सिमीकोट के व्यापारियों (दौलत तथा दमयन्ती रायपा, गंगा तथा यमुना कुटियाल, जमन सिंह बोहरा, चन्द्रा ऐतवाल, दीपक बोहरा, देवी लाल तथा मंदोदरी टिंकरी, मुहम्मद जाकिर, गोविन्द सिंह रावत, श्याम खर्कवाल, छेरिंग) आदि से।

ॐ पर्वत